राम संदेश

भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की आध्यात्मिक पत्रिका

पावन हों शिक्षा संस्कार
शुद्ध आचरण का आधार

काम काज हो या व्यापार
सभी जगह अच्छा व्यवहार

मित्र पड़ोसी घर परिवार
संबंधों में निश्छल प्यार

यदि हो पाएं तो संसार में
होगा सुख शांति प्रसार

वर्ष 66 जुलाई-सितम्बर 2018 अंक 3

रामाश्रम सत्संग, गाज़ियाबाद

विषय सूची

क्रमांक		पृष्ठ
1.	भजन	01
2.	अपनी ओर निहार लो, औरों से क्या काम *लालाजी महाराज*	02
3.	चाह और दीनतो *डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज*	05
4.	उपदेश *अनमोल वचन*	9
5.	'स्वभाव बदलो, सत्वृत्ति अपनाओ' *परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब*	12
8.	जुन्नेद बगदादी *प्राचीन मुस्लिम संतों के जीवन चरित्र*	19
9.	शोक समाचार *प्रवचन स्वामी श्री भूतेशानन्द, रामकृष्ण मिशन*	34
10.	प्रेरक प्रसंग *श्री भुवनेश्वर नाथ वर्मा, भभुआ*	36
11.	आप पुण्य आत्मा हैं *श्री भजन शंकर, गुड़गांव*	39
12.	इन्द्रियों की अग्नि में इंधन न डालें	40

राम ॐ संदेश

संस्थापक
ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज
संरक्षक
ब्रह्मलीन परमसंत डॉ. करतार सिंह जी
सम्पादक
डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना
(सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष)

वर्ष 66 जुलाई–सितम्बर 2018 अंक–3

तुम तजि और कौन पै जाऊँ।
काके द्वार जाय सिर नाऊँ, पर हाथ कहा बिकाऊँ।।

ऐसो को दाता है समरथ, जाके दिये अघाऊँ।
अंतकाल तुम्हरे सुमिरन गति, अनत कहूँ नहि पाऊँ।।

रंक अयाची कियो सुदामा, दियो अभय पद ठाऊँ।
कामधेनु चिंतामनि दीनो, कल्पवृच्छ तर छाऊँ।।

भव–समुद्र अति देखि भयानक, मन में अधक डराऊँ।
कीजै कृपा सुमिरि अपनो पन, सूरदास बलि जाऊँ।।

परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज

अपनी ओर निहार लो, औरों से क्या काम

आसमान में हर तरह की आवाज़ें – सूक्ष्म और स्थूल भरी हुई हैं, मगर उन सूक्ष्म आवाज़ों को सिर्फ़ वही सुन सकता है जिसने अपने कानों के परदे को लतीफ़ (सूक्ष्म) बनाकर उस दर्ज़े की आवाज़ों के साथ मिला लिया हो जिस दर्ज़े की आवाज़ हो रही है।

हमारे बाहरी कान किसी एक प्रकार के परमाणुओं के बने हुए हैं और अन्दर के कान किसी दूसरे प्रकार के परमाणुओं के बने हैं। बाहरी आवाज़ जो सुनाई दे जाती है वह उन्हीं मसालों की होती है जिस मसाले से हमारे बाहरी कानों के परमाणु बने होते हैं। इसलिए बाहरी कानों से हम बाहरी आवाज़ों को ही सुन सकते हैं और अन्दर के कानों से अन्तर की आवाज़ों को। ब्रह्माण्ड में और हमारे अपने अन्दर अनेक प्रकार के शब्द हो रहे है लेकिन हम केवल उन्हीं शब्दों को बाहर और अन्दर सुन सकते हैं जिनसे हमारे बाहर और अन्दर के कानों की मुताबिक़त (समानता) होती है।

यही हाल आँखों के प्रकाश का है। हमारी आँख उसी प्रकाश का ज्ञान हासिल कर सकती है जो उसी मसाले से बना है जिससे हमारी आँख बनी है, वर्ना नहीं। सब ही प्राणी किसी न किसी शक्ल में ज़बान से अपने ख्याल ज़ाहिर करते हैं मगर उनको सिर्फ़ वही सुन सकता है जिसने अपने कान की ताक़त को उस शब्द के मुताबिक बना लिया है जो ज़बान से निकल रही है। इंसान इंसान की बात सुनता है क्योंकि इसमें हम–जिन्सियत (एक जैसी हैसियत) है। चींटी चींटी से मुँह मिलाकर बात करती है क्योंकि उसमें यकसानियत (समानता) है। आवाज़ सिर्फ़ वही सुनी जा सकती है जिसके लिए कानों में क़बूलियत का माद्दा (ग्रहण करने की शक्ति) हो, फिर चाहे आवाज़ मोटी हो या बारीक़। इसी तरह रौशनी की कमी या ज़्यादती दोनों आँखों के लिए बेकार हैं। नज़र सिर्फ़ वही चीज़ आ सकती है जिसको आँख

क़बूल करे इसी तरह हमारी नाक और ज़बान का हाल है। दुनियाँ में सब कुछ है लेकिन जिसका जैसा ज़र्फ़ (अधिकार या योग्यता) है उसको उतना ही मिल सकता है, ज़्यादा कैसे नसीब हो सकता है ? पर जो मिलने वाला है वह मिलकर रहेगा, इसमें ज़रा भी शक नहीं है।

मुक़्क़दर और क़िस्मत का साफ़ और दूसरा नाम ज़र्फ़ (क़ाबलियत) है। यही नसीब है। नसीब के और कोई मायने फ़िज़ूल हैं। जिसकी जिस्मानी (शारीरिक), दिली, अक़्ली और दिमाग़ी आज़ा (अंगों या इन्द्रियों) ने जहां तक अपनी तकमील (पूर्णता) कर ली है, बस उसको उतना ही इल्म होगा और वहीं तक समझ होगी। अगर किसी को इससे इंकार है तो हमको कुछ कहने की ज़रूरत नहीं।

यह मालूम हो जाय कि किसको कितना हौसला है और कहाँ तक उसको पाने, लेने, देने और ख़ुद फ़ायदा पहुँचाने का हक़ है। यही सबब (कारण) है कि हम बहस मुबाहिसा वगैरा से भागते रहते हैं। आइना देखने को आँख की ज़रूरत होती है। अंधों को आइना दिखाना ग़लती है। वह क्या ख़ाक देख सकेंगे ?

हम जानते हैं कि रौशनी और आवाज़ की दुनिया में ख़ास हैसियत है। नादान कहता है 'कुछ भी नहीं'। बहुत अच्छा, कुछ भी नहीं सही। वह भी सच्चा, हम भी सच्चे, क्योंकि सच्चाई सिर्फ़ निस्बती है और निस्बत के दर्जे होते हैं। उल्लू को सूर्य नज़र नहीं आता, चिमगादड़ को रौशनी दिखाई नहीं देती, तो इनको बताने से क्या फायदा ?

योगीराज भृतहरि जी कह गए हैं कि इंसानी क़िस्मत एक छोटी लुटिया के बराबर है। चाहे उसको तालाब में डालो या समुद्र में, पानी उतना ही आवेगा जितनी बर्तन की ज़राफियत (घनत्व) है। इसी तरह नास्तिक और आस्तिक दोनों अपनी जगह पर सच्चे हैं। जो नहीं देखता वह कैसे किसी ख़ास हस्ती का क़ायल हो। जो देखता है उसको क्या हक़ है कि न देखने वाले के साथ लड़ाई करे ? अगर उसको देखने और न देखने की लियाक़त

हासिल हो गई हो तो दूसरी बात है। और जब तक वह इस तमीज़ से ख़ाली है तब तक उसका कहना और सुनना सब बेसूद (निरर्थक) है। इसका मतलब है कि कुदरत में हर जगह काबिलियत (योग्यता) अधिकार व संस्कार का सवाल मौजूद रहता है। बगैर अधिकार व संस्कार के कुछ नहीं मिलता और यह अधिकार व संस्कार भी परमात्मा के असली हुक्म पर मौकूफ़ (कृपा पर निर्भर) है :–

बे–बक्त किसी को कुछ मिला है ?
पत्ता नहीं हुक्म बिना हिला है।

इसलिए जो इल्म–इरफ़ान से बाख़बर (ज्ञान से परिचित) है उसको सिर्फ अपने काम पर लगे रहना चाहिए। और दूसरों की रूहानी तकमील (पूर्णता) वक्त के हवाले कर देनी चाहिए 'क़ब्ल–अज़–मर्ग बाबेला' (उर्दू की कहावत जिसका अर्थ है : मरने से पहले ही शोर मचाना) फ़िज़ूल है। हम धीरे–धीरे अपनी ज़िन्दगी के मरहलों (समस्याओं) को तय करते चले जा रहे हैं। जो हालत आज है वह कल नहीं थी और जो हालत कल होगी वह आज नहीं है। हम सब लोग तबदीली (परिवर्तन) की हालत में रहते हैं। जब यह अच्छी तरह समझ लिया कि हालतें बदलती रहती हैं तो फिर किसी से क्यों उलझना चाहिए ?

इंसान क्यों न सबके साथ मिलजुल कर अपना काम करे ? ख़ैरियत भी इसी बात में है कि सिर्फ अपनी तरफ़ नज़र रखें और जीवन के व्यावहारिक रूप का ज्ञान रखते हुए अपनी ज़ाती (निजी) भलाई का ख़्याल करता रहे–

जन्म–मरण का दुःख याद कर, कूड़े काम निवार,
जिन जिन पन्थों चालना, सोई पन्थ संवार !
अपनी ओर निहारिये, औरों से क्या काम,
सकल देवता छोड़कर, भजिये गुरु का नाम !!

(राम सन्देश : नवंबर–दिसंबर; १९९७)

प्रवचन गुरुदेवः डा.श्रीकृष्ण लालजी महाराज

चाह और दीनता

मनुष्य यह नहीं जानता कि वास्तव में वह चाहता क्या है और प्रभु से माँगता क्या है। उसके अंतर में अनेक प्रकार की चाहें उठती रहती हैं और वह उन्हीं के अनुसार व्यवहार करता है। किसी वस्तु या स्थान के विषय में कुछ सुना तो उसे प्राप्त करने की या देखने की इच्छा प्रबल हो उठती है। कहीं यह सुन लिया कि मालिक दर्शन करने योग्य हैं, उनके दर्शन अवश्य करने चाहिये, तो वैसी चाह उठने लगी। यदि यह चाह प्रबल हुई तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह अब और वस्तु नहीं चाहता, केवल मालिक के दर्शन करने हैं। किन्तु यह चाह क्षणिक होती है। उसे यह मालूम नहीं कि उसके अन्दर अनगिनत दूसरी चाहों के अम्बार लगे हुए हैं और जिस समय उन चाहों में से किसी एक या एक से अधिक ने उग्र रूप धारण किया और संसार के भोग रसों का झोंका आया तो मालिक के दर्शनों की चाह का पता भी न रहेगा कि किधर विलीन हो गई। अंतःकरण मलीन है, पर्दे पर पर्दे पड़े हैं। हर पर्दे से चाहें उठती हैं और जितनी नीचे से चाह उठेगी, ऊपर वाली चाह को दबा लेगी। यदि मालिक से मिलने की चाह अंतःकरण (ब्रह्माण्डी मन या सतोगुणी मन) के भीतरी पर्दे से होती तो वह अन्य चाहों के उठने पर इस तरह विलीन नहीं हो जाती। वह चाह तो अंतःकरण के बाहरी पर्दे (पिंडी मन या रजोगुणी मन) से उठी थी इसलिए जल्दी विलीन हो गई।

सत्संगियों की भी न्यूनाधिक यही दशा होती है। जिस समय जो चाह जागृत होकर उभार लेती है उस समय उसी का वेग रहता है और उसी के अनुसार कर्म होने लगते हैं। जब तक कोई चाह प्रबलता से नहीं उभरती तब तक वह यह समझता है कि अब कोई संशय शेष नहीं रहा, सब बातें अच्छी तरह समझ ली, अब तो केवल एक ही चाह शेष है कि मालिक के दर्शन हो जाएं। किंतु यह सोच–विचार बिलकुल ग़लत है क्योंकि जो चाहें मन में अभी गुप्त रूप से जमा हैं उनकी उसे अभी सुध भी नहीं है। मनुष्य

जब भजन, ध्यान और ईश्वर का स्मरण करने बैठता है तो चाहों के हजूम सामने आने लगते हैं। स्मरण, ध्यान व भजन जिसके लिए वह बैठा था, सब ग़ायब हो जाते हैं। यदि मालिक से मिलने और उसके दर्शन करने की चाह के सिवाय और कोई चाह अंतर में मौजूद नहीं थी तो यह सब चाहें कहाँ से आ गईं। बात वास्तव में यह है कि ये सब चाहें मन में पहले से ही जमा थीं और जमा हैं। अन्तर केवल इतना है कि जो मनुष्य संत सद्गुरु की शरण में आए हैं और जिनको उन्होंने उपदेश दे दिया है उनके अंतःकरण में ईश्वर से मिलने और उसके दर्शनों की चाह के बसने की जड़ जम गई है। उनके अंतर में वह चाह नीचे के पर्दों तक प्रवेश करती जाती है और सदा मौजूद रहती है चाहे देखने में उनका व्यवहार निपट संसारियों का सा क्यों न हो, चाहे जितने भी झकोले दुनिया के झंझटों के आवे वह चाह नष्ट नहीं होगी, बीज रूप में बनी अवश्य रहेगी। बहुत समय तक गुरु के सत्संग में रहने से जब वह चाह निज मन और सुरत में बस जावेगी तब कोई डर नहीं रहेगा, यह निश्चय हो जाएगा कि कभी वह चाह प्रबल रूप धारण करेगी और एक न एक दिन उसके प्रभाव से मालिक से मिलना हो सकेगा। किंतु यह कदापि नहीं भूलना चाहिए कि मालिक से मिलना या उनके दर्शन प्राप्त करना कोई दाल-भात नहीं है जो आसानी से खा लिया जाए। जब दुनिया और दीन की सब चाहों में आग लगा दी जायेगी, केवल एक चाह मालिक से मिलने की ही शेष रहेगी और मनुष्य के सब व्यवहार, आंतरिक और बाहरी, उसी के अंतर्गत होंगे, सब पाप का नाश हो जायेगा तब मालिक के दर्शन होंगे।

यह युग प्रेम और भक्ति का है जो बिना दीन बने नहीं आ सकती। यदि सच्ची चाह मालिक से मिलने की और उनके दर्शन प्राप्त करने की होगी तो सच्ची दीनता भी आवेगी और उससे परमार्थ की कार्यवाही सुगमता से बन पड़ेगी। यदि सच्चे गुरु की शरण प्राप्त कर ली है और उनके उपदेश का पालन करता है तो चाहे वह कहीं रहे उसका परमार्थ बनना शुरु हो जायेगा। जो बीज सत्गुरु ने उसमें डाल दिया है वह नष्ट नहीं होगा। जब भी उससे सच्चे परमार्थ की कार्यवाही बनेगी वह बीज अंकुर बन कर फूटेगा

और फूलेगा फलेगा। उसकी एक न एक दिन सब चाहें नाश हो जायेंगी। केवल एक ही प्रबल चाह रह जाएगी कि कब मालिक के दर्शन प्राप्त हों। सत्गुरु के चरणों में प्रीति आना बड़े सौभाग्य की बात है। इसी के द्वारा सब मार्ग सुगम हो जाता है। सच्चे मालिक की प्राप्ति की चाह या ऐसी चाहें जो उसके प्राप्त होने में सहायक हों, उनको छोड़ कर शेष सब चाहें निकृष्ट हैं और दुनिया में फंसाने वाली हैं। संसारी चाहों के पूरा होने से परमार्थ की कार्यवाही नहीं बन सकती। यह भले ही हो जाए कि हर मृत्यु से कुछ कर्म कट जाएं, कुछ कर्म बोझ हल्का हो जाए और आगे चल कर जब इन सब से ऊब जाये तब मालिक से मिलने की सच्ची दीनता पैदा हो तथा सच्चे परमार्थ की करनी बने।

सच्ची दीनता यह है कि संसार से दुःखी होकर उसे छोड़ना चाहे। जो इस संसार से दुःखी है उसे यहां कि कोई वस्तु नहीं सुहाती, किसी वस्तु में आवश्यकता से अधिक उसका ध्यान नहीं जाता। वह यहां इस तरह रहता है जैसे कोई परदेसी हो जो दूसरी जगह जाकर बेबस और लाचार हो जाता है और यही समझता है कि यह देश मेरा नहीं है। जिसका कोई हाल पूछने वाला नहीं और जैसे संसार तथा उसके पदार्थों से कोई लगाव नहीं है उसका पूछने वाला परमपिता परमेश्वर है। ऐसा मनुष्य सच्चा दीन और ग़रीब है। ग़रीब से मतलब यह है कि उसके पास किसी का बल और नहीं है। न तो वह संसार के किसी योग्य है और न ही वह परमार्थ की करनी ही भली प्रकार कर सकता है। ऐसे दीन पर मालिक ख़ूब दया करता है और उसके सब काम भली प्रकार बनते चलते हैं। उसको सिवाय मालिक के किसी दूसरे का बल और सहारा नहीं है। जो मनुष्य ऐसा दीन होगा वह सत्गुरु के वचन हितचित से सुनेगा और उन पर अमल करेगा। यह हुई उत्तम दीनता। इससे भी उत्तम अर्थात् सर्वोत्तम दीनता होती है, वह है प्रेम रूप दीनता। प्रेम में वह आकर्षण होता है कि सुरत स्वयं मालिक की ओर को खिंचती है क्योंकि वह उसका अंश है। जब मनुष्य के सब आपे दूर हों, सिवाय परमात्मा के और किसी का भरोसा न हो तब प्रेम की अवस्था प्राप्त होतीं है और वही पूर्ण दीनता की अवस्था है। जब सच्चा और पूर्ण दीन बने

तो दीनबंधु और दीनानाथ का कृपा पात्र बने। अतः दीनता को अपनाना चाहिए, पहले चाहे वह निकृष्ट श्रेणी की ही क्यों न हो। धीरे–धीरे वह उत्तम और अति उत्तम श्रेणी की भी हो जायेगी। इस काम में सत्गुरु का सत्संग बहुत लाभदायक है। जब–जब सत्गुरु का संग मिले उसका लाभ उठाना चाहिए।

असली सत्संग यह है कि सत्गुरु की वाणी को याद रखे और उनके आदेशों पर चलने का प्रयत्न करे। संत लोग ज़ाहिरदारी उपदेश बहुत कम करते हैं क्योंकि अभ्यासी इस कान सुनते हैं और उस कान से निकाल देते हैं। वे उपदेश उसी को करते हैं जो उसका पालन करने की कोशिश करते हैं अन्यथा वह मौन धारण कर लेते हैं। क्योंकि बात यदि स्पष्ट कही जाए तो जो व्यक्ति मनमत है और अपने मन के कहने पर चलता है वह उनके वचन सुनकर बिलकुल ही अलग हो जाएगा। जब तक वह अपने मन के मुताबिक़ व्यवहार कर रहा है तो मन की ओट में कुछ भक्ति भी कर रहा है। संभव है आगे चल कर सीधे रास्ते पर आ जाए। और यदि उसको कोई बात साफ–साफ कही जायेगी, तो जो वह कर रहा था उसको भी छोड़ देगा और जो कुछ लाभ हो रहा था उससे भी वंचित हो जाएगा। इसलिए संत लोग ऐसे अभ्यासियों के साथ ख़ामोशी इख़्तियार कर लेते हैं और इसी में उनकी भलाई है।

मेरे ईश्वर

हज़ारों ऐब हैं मुझमें, नहीं कोई हुनर बेशक।
मेरी खामी को तू खूबी में तब्दील कर देना।।
मेरी हस्ति है एक खारे समंदर सी मेरे दाता,
तू अपनी रहमतों से इसको मीठी झील कर देना।।

साभार– *InspiringQuotes.in*

परमसंत डा.श्रीकृष्ण लाल जी महाराज के अनमोल वचन

उपदेश

- सूरज से मिलकर एक हो जाने की ताकत किसकी है? जिसने उसके रूप का दर्शन किया वह बेहोश हो गया। तू के जल्वे की बात सुनी होगी। उसका जल्वा पहाड़ पर पड़ा, टूट कर चकनाचूर हो गया। उसकी नजदीकी (सामीप्य) हासिल हो सकती है लेकिन उससे मिलकर एक नहीं हो सकते। हर तरीके की किताबें पढ़ लेने से और अपने आपको ईश्वर मान लेने से नुकसान होता है।

❖❖❖❖❖

- हमारे यहाँ का – सन्तमत का लक्ष्य यह है कि अपना एक आदर्श बना लो। उस (आदर्श, गुरू) को सम्पूर्ण रूप से ईश्वर रूप मानकर अपने आपको उसको समर्पण कर दो, पूरी तरह से लय हो जाओ। यही हवंस है, यही लक्ष्य है।

❖❖❖❖❖

- असली सत्संग यह है कि सत्गुरु की वाणी को याद रखे और उसके आदेशों पर चलने का प्रयत्न करे।

❖❖❖❖❖

- प्रश्न– दीनता कैसे प्राप्त हो?

  उत्तर– सन्तों के चरणों में बैठने से दीनता प्राप्त होती है। सन्त इतने दीन होते हैं कि उनमें बड़प्पन लेशमात्र भी नहीं होता। वे बच्चों के तरह भोले भाले होते हैं। यदि हम बराबर उनसे सम्पर्क रखें, उनकी सेवा करें, उनके चरणों में बैठें तो उनके स्वभाव का हम पर भी असर पड़ेगा। उनके से गुण आने लगते हैं, दीनता आने लगती है। चन्दन के पेड़ का असर आस–पास के पेड़ों पर भी पड़ता है, उनमें भी खुशबू आने लगती है।

❖❖❖❖❖

- सबका मालिक एक ही है। वही बाप है, प्यारा बाप है। उसे केवल अपने शुभ–अशुभ कर्मों का जज ही मत समझो उसे सच्चा बाप समझो। वह भूत, भविष्य सब जानता है, सर्वशक्तिमान है। वही सही मायने में जानता है कि हमारी भलाई किस में है। उसी पर निर्भर क्यों न रहो, उसी में तुम्हारी भलाई है।

❖❖❖❖❖

- जब किसी सन्त के पास सोओ तो उसके ख़्याल में सोओ। सन्त का स्थान बहुत ऊँचा होता है। उसी का ध्यान करने से साधक को भी उसी घाट का लाभ होता है। सन्त की आत्मा मन के फंदे से न्यारी हो चुकी होती है। जो कोई उनका ख़्याल करते हैं, उनकी आत्मा भी ख़्याल के सहारे ऊँची उठ जाती है। सन्त के साथ रात को जागता रहे और बाहोश (चैतन्य) रहे तो उसका बड़ा गहरा असर होता है।

❖❖❖❖❖

- दुनियाँ की चीजों के लिए यत्न करना बहादुरी नहीं है। वह तो तुम्हारे लिए पहले से निश्चित हैं। तुम्हें मिलेंगी ही। जो इससे उपराम हो गये हैं उन्हीं के लिए सन्तमत है। सन्त उनसे कहते हैं– ''आओ हम तुम्हें रास्ता बतायें, हम तुम्हारी मदद करेंगे और ईश्वर भी तुम्हारी मदद करेगा। मगर पुरुषार्थ तो तुम्हें करना ही पड़ेगा। आत्मा का रूप समझने के लिए शरीर, मन, बुद्धि और अहंकार का पर्दा हटाना ही पड़ेगा। तब आत्मा का दर्शन होगा क्योंकि आत्मा इन सब से दबी हुई है।

❖❖❖❖❖

- अपने प्रेम को परमात्मा के प्रेम की आग में तपा लो। फिर उसकी मैल कट जायेगी और वह प्रेम अनन्त बन जायेगा।

❖❖❖❖❖

- जहाँ वासना मौजूद है, किसी स्वार्थ को लेकर किसी से प्यार है, वह बदलने वाला है। अगर उसे परमात्मा के प्रेम में सराबोर कर दो, ईश्वर की भक्ति में उसे रंग दो तो वह बढ़ता जाता है– न बदलता है न घटता है। इसमें दोनों का भला है। जिससे प्यार करोगे उसका भला है और अपना भी भला है।

❖❖❖❖❖

- हमारे यहाँ का रास्ता सबसे सरल और सीधा है। यह प्रेम का रास्ता है। सब अवतार व पैगम्बर हमें प्यारे हैं। लेकिन रास्ता हमारा वह है जो हमारे वंश के महापुरुषों ने हमें दिखाया है। सबकी नसीहत अच्छी है। सबमें से अच्छाई को छांट लो। अगर किसी की कोई चीज तुम्हें पसंद नहीं आती तो उसकी बुराई मत करो। प्रेम का रास्ता सबसे छोटा व सरल रास्ता है।

❖❖❖❖❖

- जो कर्म किये हैं उनका फल अवश्य मिलता है, लेकिन अगर परमात्मा के चरणों का आश्रय लिए रहोगे तो कर्म आसानी से कट जायेंगे और आगे के संस्कार नहीं बनेंगे।

  मन जिन चीजों का अभ्यस्त हो जाता है उनको आसानी से नहीं छोड़ता, उनका चिन्तन करता रहता है और अवसर मिलने पर उनको भोगता है। अतः जिन चीज़ों को आप बुरा समझते हैं कोशिश कीजिए कि वे आपके सम्पर्क में न आयें वर्ना कोशिश करने पर भी आप उनसे नहीं बच पायेंगे।

प्रार्थना और ध्यान इंसान के लिए बहुत ही जरूरी हैं। प्रार्थना में भगवान आपकी बात सुनते हैं, और ध्यान में आप भगवान की बात सुनते हैं।

प्रवचन परमसंत डॉ.करतार सिंहजी साहब

'स्वभाव बदलो, सत्‌वृत्ति अपनाओ'

प्रत्येक अभ्यासी जब आता है तो कहता है कि उसका मन उसके वश में नहीं है, संकल्प-विकल्प उठते रहते हैं, साधना में मन नहीं लगता। साधना करने के लिए उत्साह और उमंग नहीं है। ये बातें साधना में बाधा डालती हैं। पूज्य गुरु महाराज के प्रवचन या अन्य महापुरुषों की जीवनियाँ पढ़कर हम चाहते हैं कि जो आन्तरिक अवस्था उनकी थी, वह थोड़े ही दिनों में हमारी भी हो जाये। चाह तो अच्छी है और परमपिता परमात्मा कृपा करें कि आप जैसा बनना चाहते हैं वैसा बन जायें, परन्तु वास्तविकता को भी देखना चाहिये। हमारे मन की हालत क्या है ? हमारे इस जीवन का विस्तार कैसे हुआ है ? कितने जन्म हमने इस जन्म से पूर्व लिए हैं, उन सबके संस्कार हमारे चित्त पर जमा हैं। इस जीवन में भी हम अपने विचारों द्वारा और अधिक संस्कार एकत्रित करते जा रहे हैं।

साधना यह है कि हमें अपने चित्त को निर्मल करना है, मलिन बर्तन को माजना है, साफ करना है। जितना कूड़ा-करकट भीतर में पड़ा है, वह सब बाहर निकालना है। अपने भीतर के अवगुणों को देखकर हमें लज्जा आती है। समाज के सामने हम अपना कोई और रूप व्यक्त करते हैं, मगर भीतर में हम अपने आप को छिपा नहीं सकते। जब तक हमारा चित्त निर्मल नहीं होगा हम सच्चे जिज्ञासु नहीं बनेंगें।

चित्त निर्मल करने के दो मुख्य साधन हैं। एक है- भक्ति द्वारा। किसी महापुरुष की सेवा में जाते रहें। उनसे स्नेह करें, उनके जीवन का अनुसरण करें, उनके आदेशों का पालन करें। अपने आप को उनके चरणों में समर्पित कर दें, अर्थात् जैसा वे चाहें हम करें। अपनी मनमानी नहीं करें। उनकी सेवा में बैठकर धीरे-धीरे यह मन निर्मल होता चला जायेगा। हम सत्संग में भी जाते हैं, अपने पूज्य गुरुदेव के प्रवचन एवं पुस्तकें भी पढ़ते हैं, परन्तु

व्यवहार में हम मनमानी करते हैं। हमारे स्वभाव में हठ है, ज़िद है, ईर्ष्या है, द्वेष है। सत्संग तो यह नहीं सिखाता। पूज्य गुरु महाराज तो यह नहीं सिखाते।

सत्संग का अर्थ है सत् का संग, प्रेम का संग। प्रेम का हम संग करते हैं पर हमारे भीतर में ईर्ष्या है, द्वेष है, घृणा या अन्य दूसरी बुरी भावनायें हैं, जैसे किसी का शोषण करना, किसी को गुमराह करना, जीवन में धर्म को छोड़कर अधर्म की कमाई करना, इत्यादि अनेकों अवगुण हैं। जिस व्यक्ति ने अपने आप को प्रेम के चरणों में समर्पित कर दिया है यदि उसमें ये बातें होतीं हैं तो इसका मतलब है कि उसे अपने प्रीतम परमात्मा के प्रति श्रद्धा और विश्वास नहीं है। वह अपने इष्टदेव की बातों को मानने के लिए तैयार नहीं हैं और मनमानी करता है। हमारा यह मन साधना में बड़ी बाधा डालता है। इसी को मांजना है। इसको वैसा बनाना है जैसे आपके गुरु हैं। इसको आत्ममय बनाना है, ईश्वरमय बनाना है।

पूज्य लाला जी महाराज कहते थे कि लोग–बाग कई प्रकार के तप करते हैं। अग्नि के सामने बैठ जाते हैं, तेज़ धूप, गर्मी में बैठ जाते हैं। ऐसा तप करना तो सरल है परन्तु इस मन को क़ाबू में लाना बहुत कठिन है। तपस्या करनी पड़ती है, आहुति देनी पड़ती है।

ये साधारण बातें हैं कि काम क्रोध आदि पर क़ाबू पाओ। मन का जो अपना विशेष रूप है वह है 'अहंकार'। जो मैं सोचता हूँ वही ठीक है, जैसा मैं चाहता हूँ, संसार वैसा ही करे। यदि ऐसा नहीं होता तो दुःख होता है। हम गुरुमत नहीं बनते। जैसा गुरु कहता है उसके अनुसार नहीं चलते। हम मनमत करते हैं। कौन करता है यह मनमत ? यह हमारा अहंकार है। मुसलमान लोग इसको 'मूज़ी' कहते हैं – गिरा हुआ। इसका प्रभाव किसी के भीतर में अधिक किसी के भीतर में कम होता है, परन्तु कोई भी व्यक्ति इससे बचा नहीं है। हमसे अवगुण कराने वाला जो राजा है वह है 'अहंकार'। मन को माजने का अर्थ है हमें इन सबसे मुक्त होना है। अवगुणों से मुक्त इस मन को गुरु प्रेम, ईश्वर–प्रेम, अपने इष्टदेव के प्रेम से रंगना है। इस

मन रूपी चुनरी को इतना रंगना है कि एक भी दाग न रहे। हमारे भीतर में प्रेम ही प्रेम हो, सरलता ही सरलता हो, दीनता ही दीनता हो।

भक्ति या ज्ञान, कोई भी साधना जो आपको अच्छी लगे उसे अपना लें। परन्तु गम्भीरता के साथ, व्याकुलता के साथ अपनायें क्योंकि यह मनुष्य शरीर बार–बार नहीं मिलेगा। हमारे खान–पान में, वाणी में, रहनी–सहनी में, कितनी ही कमज़ोरियाँ हैं, बड़े ही अवगुण हैं। पाँच तत्वों की साधना करने से निवृत्ति नहीं मिलेगी। पूज्य दादा गुरूदेव का आदेश है कि पहले उन बुराइयों को लो जो साधारण हैं, जिन्हें आप आसानी से छोड़ सकते हैं। उसमें सफलता मिल जाने पर हमें उत्साह मिलेगा। यदि आपने किसी कठिन बुराई को लिया छोड़ने के लिये और वह नहीं छूटी तो आपको बड़ी निराशा होगी और निराशा इस मार्ग में बड़ी बाधा डालती है। स्व–निरीक्षण करते रहें और किसी ऐसे महापुरुष के पास जाते रहें जिनके प्रति आपके मन में श्रद्धा है, जिनकी बात आप मानते हैं। उनका शारीरिक संग भी करें। वो सत्–स्वरूप हैं, उनके श्री चरणों में बैठें। उनके शरीर से सत् की, पवित्रता की, निर्मलता की, प्रेम गंगा की शीतलता की तरंगें, रश्मियाँ प्रतिक्षण निकलती रहती हैं। उनके पास बैठने से हम ईश्वर–प्रेम रूपी गंगा में स्नान करते हैं। हमारे अवगुण धीरे–धीरे धुलते चले जाते हैं। इसके साथ–साथ यदि हम उस महापुरुष के आदेशों का गंभीरता के साथ पालन भी करें तो हो सकता है कि प्रभु आप पर कृपा करें और आपके सब अवगुण धीरे–धीरे धुलते चले जायें और आपका बर्तन, आपका चित्त मंज जाये, निर्मल हो जाए और उसमें ईश्वर का प्रेम भर कर आप ईश्वरमय हो जायें, आनन्द–रूप, आत्म–रूप बन जायें।

धर्म को अपनाना, आचरण को शुद्ध बनाना, सद्विचार, सद्व्यवहार, मधुर वाणी बोलना – ये साधना रूपी भवन की नींव हैं। जो कुछ आपके भीतर में होगा, वही बाहर भी व्यक्त होगा। यदि आपके भीतर में मधुरता होगी तो बाहर अप्रयास ही मधुरता व्यक्त होगी। भीतर में यदि कोई विकार

है तो आप कितनी भी कोशिश कर लें वह आपकी वाणी और व्यवहार में व्यक्त हो ही जायेगा।

तो हमसे जो बुराइयाँ होती हैं, हमारे भीतर में जो कूड़ा–करकट, मलीनता भरी हुई है जिसके कारण हमें प्रभु के दर्शन नहीं होते, आत्मा की अनुभूति नहीं होती उन त्रुटियों के कारण हमारे विचार बनते हैं, हमारी वाणी निकलती है, हमारा पतन होता है। साधन यही है कि हमारे विचार शुद्ध हों, पवित्र हों, ईश्वरमय हों, हमारी वाणी मधुर हो, हमारा व्यवहार दूसरों को सुख पहुँचाने वाला हो। प्रेम में आहुति दी जाती है, बलिदान दिया जाता है। अपने सुख की चिन्ता न हो, दूसरों को सुख, शान्ति, आनन्द मिले।

हमें इस चित्त को खूब माजना है। यदि संस्कार रह जाते हैं तो दूसरा जन्म अवश्य होगा। इन संस्कारों के अनुसार ही दूसरा जन्म होगा। हम वहीं जायेंगे जहाँ हमारे संस्कार हमें ले जायेंगे। हमें अपना चित्त बिलकुल निर्मल करके यहाँ से जाना है। मोह नहीं, आत्मिक प्रेम उत्पन्न होना चाहिये जिसमें कोई विकार न हो, अतीत की स्मृति न हो। सादगी हो, ताज़गी हो, नवीनता हो।

तामसिक तथा राजसिक वृत्ति का त्याग करके 'सत' वृत्ति को अपनाना चाहिये। हम सब तीन गुणों से जकड़े हुए हैं – तमोगुण, रजोगुण और सतोगुण। यदि हमारे भीतर में तम है तो हमारी वृत्तियाँ तमोगुणी हैं जिससे खूब क्रोध आता है, बदले की भावना उठती है। राजसिक वृत्ति वाला कभी तो सबको प्रेम करता है, खूब सेवा करता है और कभी मामूली सी बात पर झगड़ा कर लेता है यानी उसमें उतार–चढ़ाव आते हैं – नेकी की तरफ़ भी और बुराई की तरफ़ भी। अधिकांश लोग राजसिक वृत्ति के होते हैं। सतोगुणी वृत्ति का व्यक्ति शान्त रहता है। वह दूसरों को दुःख नहीं पहुँचाता। परन्तु ये तीनों गुण बन्धन हैं। स्वामी रामकृष्ण जी कहते हैं कि तमोगुण लोहे की जंजीर है, रजोगुण चाँदी की जंजीर है और सतोगुण सोने की जंजीर है, परन्तु हैं तीनों ही बन्धन। तीनों गुण ख़त्म होते हैं आत्मा में जाकर 'सत्य'

में। भीतर भी सत्य है, बाहर भी सत्य है। सत्य का ही दूसरा नाम 'प्रेम' है, आत्मिक आनन्द है। बौद्ध मत में संस्कारों को खत्म करना, विसर्जन करना ही 'मोक्ष' या 'निर्वाण' कहलाता है। हमें चाहिये कि हम तम और रज का त्याग करके सात्त्विक वृत्ति को अपनायें। जन्म मरण के चक्र से वही व्यक्ति बचेगा जो सत् स्वरूप हो जायेगा, जहां आत्मा ही आत्मा है।

सत्वृत्ति के साथ अन्तर में कोमलता तथा सरलता आनी चाहिये। साधना करते-करते यदि हमारे हृदय में कोमलता नहीं आती तो हम अभी राजसिक वृत्ति में हैं। अपने सुख के लिए तो सभी इच्छुक होते हैं परन्तु दूसरे को सुख, शान्ति, आनन्द और सन्तोष देना, तन-मन-धन से उसकी सेवा करना, जब हम ऐसा करते हैं तब हम कोमलता की ओर बढ़ते हैं। सारे संसार के लिए प्रार्थना करनी चाहिये- हे प्रभु! सबक भला हो। आप बच्चे की तरह सरल बन जायें। सबसे स्नेह लें और सबको स्नेह दें। हम भीतर में कुछ हैं और बाहर में कुछ और हैं। यह सरलता नहीं बनावट है जो खत्म होनी चाहिये।

सत्य बोला जाये परन्तु उसके साथ कड़वी वाणी न हो। उसमें मिठास होनी चाहिये। सत्य वाणी के साथ यदि कड़वापन आता है तो सत्य का स्वरूप बिगड़ जाता है। आपके सत्य के कड़वेपन से दूसरे को इतना दुःख पहुँचता है जिसका आपको अहसास नहीं होता। जब आप किसी से कठोर शब्द बोलते हैं तो आप ऐसा पाप करते हैं जैसे आपने किसी का वध कर दिया हो। राजसिक वृत्ति वाला व्यक्ति इन बातों की चिन्ता नहीं करता। दूसरों को दुःख देकर उसे आनन्द मिलता है। परन्तु सात्विक वृत्ति वाला व्यक्ति आप तो दुःख उठा लेता है, दूसरे को दुःख नहीं देता। हमारे शब्दों में मधुरता का संगीत होना चाहिये। यदि भीतर में मधुरता होगी तो आपको शान्ति का अनुभव होगा।

अपनी वाणी से किसी का दिल नहीं दुखाना चाहिये। यह बड़ा पाप है। कड़वे शब्दों में विष होता है। आपके शब्द दूसरों को और आपको भी जला देते हैं। सत्य में मधुरता छिपी है, अव्यक्त है जैसे परमपिता परमात्मा का

स्वरूप निर्गुण और निराकार है परन्तु उसमें सगुण और साकार रूप छिपे हैं। परमात्मा भी हमको स्नेह करता है, प्यार करता है, भले ही हम अनुभव न करें। अहंकार के कारण हम उस स्नेह को स्वीकार नहीं करते।

मनुष्य में दूसरे का दुःख देखकर अपने अन्तर में दुःख उत्पन्न हो और यह भावना आये कि किसी तरह से उस दुःखी मनुष्य को उसके दुःख से निवृत्ति दिलाई जाये। यह कोमलता हमारे स्वभाव में सहज हो जाये। अप्रयास ही हम दूसरों की सेवा करें। दूसरों को दुःखी देखकर उनके दुःख की निवृत्ति करने का प्रयास करें। हम तो प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभु! सबका भला करो परन्तु यह प्रार्थना हम कभी नहीं करते कि सबका दुःख हमें दे दो और हमारा सुख औरों को दे दो। कितना ऊँचा आचरण है कि सबके दुःख मुझे दे दो।

किसी को ख़ुश देखकर मन में ईर्ष्या न आये, मनुष्य मन में स्वयं हर्षित हो। यह हमारा स्वभाव बन जाये। यह ईर्ष्या कई रूप लेकर व्यक्त होती है। ख़ास तौर पर यदि हमारा कोई रिश्तेदार आगे बढ़ जाता है तो मन में ऐसी ईर्ष्या आती है। सच्चे जिज्ञासु के मन में ऐसी वृत्ति उत्पन्न नहीं होती। वह दूसरे के सुख को देखकर सुखी होता है और दूसरे को दुःख को देखकर दुःखी होता है।

सबकी भलाई में मनुष्य अपनी भलाई समझे। यह गीता का, हमारे सारे साहित्य का सार है। जो ज्ञान साधना करते हैं वे अपने आपको कहते हैं ''मैं ब्रह्म हूँ''। ब्रह्म में सारा विश्व समाया हुआ है। विश्व का सुख–दुःख सब मेरा ही है। आत्म–स्थित होकर उनको दुःख–सुख, गुण–अवगुण प्रभावित नहीं करते। वे सबको अपना ही समझते हैं। भक्त को कुछ प्रयास करना पड़ता है। साधना करनी पड़ती है। सच्चे जिज्ञासु को, जिसने सात्विक गुणों को अपना लिया है की वृत्ति बन जाती है कि वह दूसरों को सुख पहुँचाने का प्रयास करे। वह दूसरे के दुःख में दुःखी, दूसरे के सुख में हर्षित होता है। यह उसका स्वभाव बन जाता है।

गुरु महाराज का आदेश है कि सद्गुणों को अपनाते चले जाइए एवं ईश्वर को भूले नहीं। ईश्वर के स्वरूप को कभी न भूलें और ईश्वर के उन गुणों को भी न भूलें जिन्हें अपनाकर हमें उनके चरणों में जाना है। राम के स्वरूप को अपने रोम–रोम में समाहित कर लें तभी आप कह सकेंगे कि ''तन में राम, मन में राम, रोम–रोम में रामहि राम"।

जब ऐसी अवस्था परिपक्व हो जाती है तब परमार्थी वेग से परमार्थ की ओर बढ़ता है और कुछ ही समय में वह आत्मा का साक्षात्कार कर लेता है। जब मलीनता ख़त्म हो जाती है, सद्गुण आ जाते हैं, सत्वृत्ति बन जाती है, ईश्वर–प्रेम को आप धारण कर लेते हैं तब अधिक समय नहीं लगता। आत्मा का साक्षात्कार हो जाता है, परमात्मा के दर्शन हो जाते हैं।

तो साधना में सदगुणों को अपनायें। सद्विचार, मधुर वाणी, सद्व्यवहार हो और इनके साथ प्रभु की स्मृति बनी रहे। प्रभु के गुणों की स्मृति बार–बार करते रहें। परमात्मा के अनगिनत नाम हैं, अनगिनत गुण हैं। उसके जितने गुण आप याद करेंगे उतने ही वे आपके भीतर अंकित होते चले जायेंगे। भक्ति में हम भाव बनाते हैं, पिता–पुत्र का, स्वामी–सेवक का, पति–पत्नी का, वात्सल्य का, प्रीतम–प्रेयसी का। जो भी भाव आपको अच्छा लगे, अपना लें। भक्ति में भगवन्त के चरणों में बैठकर उनकी सेवा करते हैं, उनका उपदेश सुनते हैं, उन पर मनन करते हैं। हमारे जीवन में मनन की कमी है। हमें मनन करना चाहिये और वैसा बनने का प्रयास करना चाहिये।

गुरुदेव आप सबको शक्ति दें कि जैसी गुरुदेव हमसे आशा रखते थे, हम वैसे बन जायें। हर माँ–बाप की एक ही इच्छा होती है कि उसकी संतान योग्य निकले, जो उसके नाम को बढ़ाये। सन्त इच्छामुक्त होते हैं। तब भी वे यही चाहते हैं। वह प्रेम द्वारा सेवा करके हम को स्वयं अपने जैसा बनाने का प्रयास करते हैं। हम भी उनमें श्रद्धा और विश्वास रख कर उनके जैसा बनने का प्रयास करें।

गुरुदेव आप सबका भला करें।

(अप्रैल 1986 अलवर)

प्राचीन मुस्लिम संतों के जीवन चरित्र

जुन्नेद बगदादी

तपस्वी जुन्नेद बगदादी, बगदाद के रहने वाले थे। वे गुरूओं के भी गुरू, विद्या–विशारद तथा समर्थ तत्वेता भी थे। साधुता सत्य भाषण और साधन आदि में सभी इन्हें अग्रगण्य समझते थे। आरम्भ से अन्त तक उनका जीवन प्रशंसनीय, पवित्र और सबके लिये अनुकरणीय रहा। उनके वचनों और धर्म विधि के प्रमाणों की सब मुक्त कंठ से प्रशंसा करते थे। उनका कोई विरोधी नहीं था। तत्व ज्ञान सम्बंधी अनेक ग्रंथों की रचना उन्होंने की थी। तपस्वी 'सरी–शक्ति' के ये भान्जे शिष्य थे।

बचपन से ही जुन्नेद ज्ञानेच्छु, मननशील और कुशाग्रबुद्धि थे। एक दिन पाठशाला से घर लौट कर उन्होंने देखा, पिता रो रहे थे। उन्होंने पिता से इसका कारण पूछा तो उत्तर मिला ''तेरे कल्याण के लिये कुछ चीज़ें मैंने तेरे मामा के पास भेजी थी, उन्होंने उन चीज़ों को लौटा दिया है, जिसके कारण मुझे बहुत दुख है''। पिता का उत्तर सुनकर जुन्नेद खुद उन चीज़ों को ले कर मामा के पास गये। मामा का दरवाज़ा खटखटा कर वे बोले ''मामा! द्वार खोलो, मैं भेंट देने आया हूँ।''

मामा बोले ''जुन्नेद! तेरी भेंट मंजूर न होगी।''

जुन्नेद– ''मामा! जिसने आप पर कृपा की है और मेरे पिता के प्रति न्याययुक्त व्यवहार रखा है, उस प्रभु के नाम पर आपको मेरी भेंट लेनी होगी।''

सरीशक्ति (मामा) ने पूछा ''प्रभु की उस कृपा और व्यवहार को तूने कैसे जाना ?''

जुन्नेद– ''उस प्रभु ने आपको साधुता दी है और मेरे पिता को धन दौलत। आप मेरी भेंट लें या न लें आपकी खुशी की बात है, पर योग्य पात्र को भेंट देना मेरे पिता का कर्तव्य था और उन्होंने वैसा ही किया है।''

यह सुन कर सरीशक्ति संतुष्ट हो गये और बोले ''वत्स! भेंट मंजूर करने के पहले मैं तुझे ही ले लेता हूँ।'' द्वार खोल कर उन्होंने जुन्नेद को छाती से लगा कर भेंट स्वीकार की।

सात वर्ष के जुन्नेद को ले कर सरीशक्ति मक्का गये। पवित्र काबा के दर्शन करके चार सौ धर्माचार्यों की सभा में धर्म चर्चा सुनने गये। वहाँ 'कृतज्ञता' पर चर्चा हो रही थी। सभी अपनी–अपनी समझ के अनुसार उस विषय पर बोले। सरीशक्ति ने जुन्नेद से कहा ''बेटा जुन्नेद! इस विषय पर तू भी कुछ बोल'।

थोड़ी देर सर झुकाये रहने के बाद जुन्नेद बोले ''प्रभु ने जो धन दौलत दी है उसे पाप कार्य में लगा कर अपराधी बनने से बचना ही सच्ची कृतज्ञता दिखाना है।''

जुन्नेद की बात सुन कर सभी धर्माचार्यों ने स्वीकार किया कि उनका कथन बहुत ही ठीक है। इससे सुन्दर बात किसी ने नहीं कही। सभी ने उन्हें आशीर्वाद दिया।

सरीशक्ति ने पूछा ''जुन्नेद! ऐसे सुन्दर वचन कहना तूने कहाँ से सीखा।''

''आपकी संगत के प्रभाव से'' जुन्नेद ने कहा।

मक्का से लौट कर जुन्नेद काँच का व्यापार करने लगे। वे रोज़ दुकान जाते पर वहाँ भी परदे के पीछे बैठ कर उपासना करने में ही ज़्यादा वक़्त बिताते। आखिर उन्होंने यह व्यापार छोड़ दिया। सरीशक्ति के घर के कोने की एक कोठरी में बैठ कर मनोग्रह और ध्यानमग्न होने में वे समय बिताने लगे। वे इतने ध्यानस्थ रहने लगे कि ईश्वर के सिवा दूसरी कोई चीज़ उनके मन में जगह नहीं पाती थी। इस प्रकार उन्होंने चालीस वर्ष बिता दिये। वे रात भर ईश्वर का नाम जपते रहते थे। इतने वर्षों बाद उन्हें मालूम दिया कि उनसे कोई अपराध बन पड़ा है। उन्होंने अपना दिल टटोल के देखा, उसमें 'अंह' भाव का नाश नहीं हुआ था। वे फिर अपनी उसी कोठरी में बैठ कर जप करने लगे। कभी–कभी लोगों को उपदेश भी देते रहते। उनके

उपदेश से लोगों का अनिष्ट होता है, ऐसा कह कर कुछ लोगों ने उनकी शिकायत खलीफा से की। खलीफा ने उन्हें यह कह कर टाल दिया कि वे बिना कारण जुन्नेद को सजा़ नहीं दे सकते।

खलीफा का चरित्र अच्छा नहीं था। एक रूपवती दासी को उसने रखैल बना रखा था। उस दासी को गहने–कपड़े से सजाकर खलीफा ने सिखाया ''तू बुरका डालकर जुन्नेद के पास जा और उनसे आसरा देने के लिये विनती कर। यह भी कहना मेरे पास धन दौलत की कमी नहीं है, पर दुनिया से मुझे वैराग्य हो गया है और मैं अब आपकी सेवा में रह कर समय बिताना चाहती हूँ।'' तरह तरह की मीठी बातें बनाकर जुन्नेद को फँसाने की तरकीब करना।

खलीफा ने दासी के साथ एक नौकर को भी भेज दिया था। जुन्नेद के पास आ कर उस सुन्दरी युवती दासी ने अपना बुरका उठा दिया। सामने एक स्त्री को देख कर जुन्नेद ने नज़र नीची कर ली। वह दासी रो–धो कर तरह–तरह की बातें बनाती रही पर वे चुपचाप नीची नज़र करके उसकी बात सुनते रहे। उसके चुप हो जाने के बाद उन्होंने गर्दन उठा कर सिर्फ इतना कहा ''हाय! अफसोस, ईश्वर की लीला।'' वह स्त्री अचानक वहीं लेट गई और उसके प्राण पखेरू उड़ गये। खलीफा के नौकर ने लौट कर खलीफा को सारी जानकारी दी। यह सुन कर खलीफा मन ही मन पछताने लगा। वह समझ गया कि साधु पुरूष के साथ अनुचित व्यवहार करने वाले को दण्ड मिले बिना नहीं रहता। खलीफा ने जुन्नेद के पास आकर पूछा ''उस खूबसूरत बुत का इस तरह नाश करने की गवाही आपके दिल ने किस तरह दी ?'' जुन्नेद ने उत्तर दिया ''सारे समाज के मालिक! आपने भी तो एक त्यागी की चालीस वर्ष तक की उपासना पर पानी फेरने का इरादा किया था। इस घटना में मेरा कोई दोष नहीं है, उसका करने वाला तो वो ईश्वर ही है। मेरे बारे में भला बुरा सोचने का आपको कोई कारण नहीं होना चाहिए।''

जुन्नेद हमेशा रोज़ा रखते थे, किन्तु यदि कोई धर्म बंधु बीच में आ जाता तो वे उस नियम को तोड़ देते और कहते ''रोज़ा रखने में जितना फायदा है, उससे कम फायदा धर्म बंधु की संगति में नहीं।''

जुन्नेद ने कोई फकीरी बाना नहीं पहना था। वे एक गृहस्थ पंडित की तरह रहते थे। किसी ने उनसे इसका कारण पूछा तो उन्होंने कहा ''फकीरी बाने से ही मतलब सिद्ध होता है तो मैं ज़रूर वैसे कपड़े पहन लेता।''

जुन्नेद का नाम चारों ओर फैल गया। लोग उनके उपदेशों की कीमत करने लगे। यह देख कर उनके गुरु सरीशक्ति ने उनसे उपदेश देने के लिए आग्रह किया। इस पर जुन्नेद बोले ''गुरु की मौजूदगी में शिष्य उपदेश दे, यह उचित नहीं।''

उसके कुछ दिन बाद जुन्नेद को सपने में हज़रत पैगम्बर मुहम्मद साहब ने सार्वजनिक उपदेश देने की आज्ञा दी। सपने का हाल उन्होंने गुरु जी को सुनाया। अब तो उन्हें गुरु के आग्रह को मानना पड़ा। उन्होंने इरादा किया कि सभा में चालीस से ज्यादा श्रोता न हों। इन चालीस लोगों को जब उन्होंने उपदेश सुनाया तो कहते हैं उस में से बाईस के प्राण तो वहीं छूट गये और बाकि अठारह मूर्छित हो गये। इस घटना के बाद उन्होंने उपदेश देना बंद कर दिया। किर भी लोग बार-बार आग्रह करते तो वे कह देते ''मेरे व्याख्यान से आपको कोई लाभ नहीं होगा, मैं किसी का वध नहीं करना चाहता।''

दो वर्ष यूं ही बीत गये। एक दिन बिना किसी आग्रह के उन्होंने व्याख्यान दिया। लोगों ने इसका कारण पूछा तो वे बोले ''हज़रत पैगम्बर मुहम्मद साहब ने एक जगह कहा है कि सम्प्रदाय में जो सबसे ओछा होता है वही उपदेशक का काम करता है। मैं आप सबसे ओछा हूँ, इसीलिये यह काम करता हूँ।''

जुन्नेद एक दिन विचार शून्य हो कर बोले ''हे प्रभु! मेरा मन मुझे लौटा दो'' इसके उत्तर में उन्हें सुनाई दिया ''जुन्नेद! मैंने तेरा मन इसलिये चुरा लिया है कि तू मेरे साथ रह सके। क्या तू उस मन को वापस लेना चाहता

है ? मुझे छोड़ कर क्या तू दूसरी चीज़ों से अनुराग करना चाहता है।''

जुन्नेद एक बार वन में से जाते समय एक कटीले पेड़ के नीचे एक युवक को देख कर उससे पूछा ''भाई तुम यहाँ क्यूँ बैठे हो ?'' वह बोला– ''मेरे पास एक सुन्दर भावना थी, वह यहाँ खो गई है, उसे खोज रहा हूँ।''

जुन्नेद मक्का जा कर लौट आये, पर वह युवक तो वहीं उसी हालत में बैठा था। उन्होंने फिर उसका कारण पूछा। अब की बार युवक ने उत्तर दिया–''मैं जो चीज़ खोज रहा था, वह मुझे यहाँ मिल गई है, इसलिये इसी जगह का आसरा ले कर बैठ गया हूँ। अब मैं विचार कर रहा हूँ कि खोजने और पाने की दो हालतों में से कौन सी अच्छी है।''

जुन्नेद के पैर में एक बार पीड़ा होने लगी। कुरान का 'फातेहा' नाम का अध्याय पढ़ कर दर्द की जगह फूँक मारी। उसी क्षण वाणी सुनाई दी – ''मेरे आध्यात्मिक वचनों का उपयोग शरीर के लिये करते तुझे शर्म नहीं आई।''

एक बार जुन्नेद की आँख दुखने लगी। हकीम साहब ने हिदायत दी कि आँखों से जल न छुआना। वजू करते समय भी आँखें धोने की उन्होंने इज़ाज़त नहीं दी। हकीम के चले जाने के बाद जुन्नेद का मन नहीं माना। उन्होंने वजू करके नमाज़ पढ़ी और सो गये। सो कर उठे तो देखा आँखें ठीक हो गईं थी। इसका रहस्य उन्हें देववाणी से ज्ञात हुआ। ''जुन्नेद! अपने संतोष के लिये मैंने यह माया कर दी थी। अपने ऐसे प्रेम के बदले में यदि तू सारे नरक वासियों का छुटकारा भी माँगे तो मैं देने को तैयार हूँ।'' दूसरे दिन हकीम साहब यह सब हाल सुनकर बहुत चकित हुये। उन्होंने कहा– ''यह रोग आपको नहीं मुझे हुआ था।''

एक बार किसी ने जुन्नेद से बार–बार कहा– ''आजकल तो धार्मिक मनुष्य मिलने ही मुश्किल हैं।'' इस पर वे बोले– ''यदि तुम्हें तुम्हारी सेवा करने वाले धर्मपरायण मनुष्यों से मिलना है तो वैसे मनुष्य मिलने तो ज़रूर मुश्किल हैं, किन्तु यदि तुम खुद धर्मपरायण मनुष्यों की सेवा करना चाहते हो तो वैसे बहुत से मिलेंगे।''

एक सभा में उनकी बहुत प्रशंसा की गई तो उन्होंने कहा– ''आप लोग जिसके बारे में कह रहे हैं, उसमें मेरा लेशमात्र भी अधिकार नहीं है। आप लोगों की यह प्रशंसा मेरी नहीं, उस ईश्वर की है।''

किसी ने पूछा– ''हृदय कब सुखी होता है ?''

उन्होंने उत्तर दिया– ''जब हृदय में प्रभु वास करते हैं।''

एक बार एक आदमी उनके लिए पाँच सौ मुद्राओं की भेंट लेकर आया। उससे बात करके उन्होंने यह जाना कि उसके पास बहुत दौलत है किन्तु फिर भी वह और अधिक दौलत की अभिलाषा रखता है। इस पर वे बोले ''अपनी यह रकम वापस ले जाओ। यही इष्ट है कि यह रकम तुम्हारे पास ही रहे। मैं तो अपने पास कुछ नहीं रखता। मेरी कोई अभिलाषा भी नहीं है।''

जुन्नेद एक बार बहुत जोर–जोर से रो रहे थे। किसी ने उनसे इसका कारण पूछा तो वे बोले– ''मैंने सुन रखा है कि विपत्ति अजगर के समान होती है। यदि यह सच है तो सबसे पहले उसके पेट में जाने के लिए मैं तैयार हूँ। मैं तो बहुत रोज से विपत्ति की बाट जोह रहा हूँ। पर मेरा सखा कहता है कि उसके प्रति मेरी ऐसी साधना नहीं हुई कि मैं विपत्ति की आशा कर सकूँ, इसलिए मैं रो रहा हूँ।''

एक आदमी मसजिद में आकर भीख माँग रहा था। उसे देखकर जुन्नेद ने कहा– ''अरे निरोगी मजबूत आदमी! तू मेहनत करने लायक है फिर भी भीख माँग रहा है ?'' उसी रात को उन्होंने सपना देखा कि कपड़े से ढका हुआ एक बर्तन पड़ा हुआ है और उसमें से आवाज आ रही है, ''ले खा ले खा''। कपड़ा हटाते ही उसमें पड़ा एक भिखारी का शव दिखाई दिया। वे बोल उठे ''मैं मनुष्य का माँस खाऊँ ?'' बर्तन में से फिर आवाज आई– ''मनुष्य का माँस तो तू आज सवेरे खा ही चुका है।'' जुन्नेद समझ गये कि सपने का मतलब सवेरे की उस घटना से ही था। उन्होंने भिखारी का अपमान किया था। अपनी भूल के लिए उन्हें बहुत पछतावा हुआ। दो बार उपासना करने के बाद वे उस भिखारी की खोज में निकले। खोजते–खोजते

नदी के किनारे वह बैठा दिखाई दिया। वह कोमल घास की पत्तियाँ धो–धो कर खा रहा था। जुन्नेद को पास आता देखकर वह बोला– ''जुन्नेद! तुमने मुझे जो पीड़ा पहुँचाई थी उसका प्रायश्चित किया ?''

जुन्नेद– ''हाँ कर लिया।''

भिखारी– ''तो ठीक, लौट जा, दास का प्रायश्चित वह प्रभु भी स्वीकार करता है। पर सावधान रहना, फिर कभी प्रयश्चित न करना पड़े।''

जुन्नेद ने कहा है कि ईश्वर से कैसा प्रेम करना है, यह उन्होंने एक हज्जाम से सीखा था। मक्का में एक दिन एक हज्जाम को एक आदमी की हजामत करते देखकर वे बोले– ''खुदा की खातिर तू मेरी हजामत कर देगा ?''

हज्जाम बोला– ''खुदा के नाम पर तो बहुत खुशी से करूँगा।'' खुदा का नाम लेते ही उसकी आँखें प्रेम से भर आईं और वह उस आदमी का काम छोड़कर बोला– ''आप ज़रा ठहरें, इस भाई ने खुदा का काम बताया है, सबसे पहले उसी का काम करूँगा।'' बड़े आदर भाव से उसने उनकी हजामत बनाई। यही नहीं उसने कुछ सिक्के एक कागज में लपेटकर जन्नेद को दिए और कहा– ''इन्हें मंजूर करो, ज़रूरत पड़ने पर इन्हें काम में लाना।'' वे सिक्के लेकर जुन्नेद ने निश्चय किया कि अब उन्हें जो सबसे पहले दान मिलेगा उसे वे उस हज्जाम को उसकी मेहनत के बदले में दे देंगे। दो तीन दिन बाद ही एक बसरा वासी ने एक थैली उनको भेंट की। उसे लेकर वे उस हज्जाम के पास गये। उनके इरादे को सुनकर वह बोला– ''आपको ईश्वर की शर्म भी नहीं आती ? आपने ईश्वर के नाम पर मुझसे हजामत बनवाई और अब आप उसका बदला चुकाने आये हैं ? ईश्वर के नाम पर काम करके उसकी मजदूरी लेनेवाला आपने कभी देखा है ? आपकी बात सुनकर मैं तो चकित सा हो रहा हूँ।''

महर्षि जुन्नेद एक बार बगदाद शहर में से होकर जा रहे थे। वहाँ पेड़ से लटकते हुए एक चोर के शव को देखकर उन्होंने उसका पैर चूमकर कहा– 'वाह! तू धन्य है। किसी ने इसका कारण पूछा तो उन्होंने कहा– ''मैं इसे

इसलिए धन्यवाद दे रहा हूँ कि इसने अपने काम के लिए प्राण दे दिए। जो काम इसने हाथ में लिया उसी में इसने अपना प्राण होम किया। प्राणपण से किसी काम को करना क्या वंदनीय नहीं है ?''

एक बार एक आदमी ने उनसे कहा– ''मैं भूख प्यास से तड़प रहा हूँ।''

उन्होंने कहा– ''बहुत ठीक, निश्चिन्त रह। ईश्वर की जिस पर मेहरबानी होती है उसी को खाने पीने की तंगी होती है। तुझ पर भी ईश्वर की वैसी ही कृपा हुई है, उसकी निन्दा न करना भाई।''

एक बार वे अपने शिष्यों के साथ बैठे थे तभी वहाँ एक धनवान आदमी आया और उनके शिष्यों में से एक को अपने साथ उठाकर ले गया। थोड़ी देर बाद वह शिष्य अपने सिर पर खाने–पीने के सामान का एक बड़ा सा बोझा उठाये वापस आया। वह धनवान व्यक्ति भी उसके साथ था। अपनी मण्डली के लिए खाने–पीने की उन चीज़ों को आया देखकर जुन्नेद को बड़ी लज्जा मालूम दी। उन्होंने अपने शिष्य से कहा– ''जा, यह सामान उसी विषयी धनवान को लौटा दे। तू ऐसा बोझा ढोने का काम करेगा तो फिर साधु जीवन क्या पालेगा ?'' बाद में वे उस धनवान को सम्बोधित करके बोल– ''फकीरों के पास धन दौलत नहीं होती, पर उनके पास होता उनका लक्ष्य। उनके पास संसार नहीं परन्तु परलोक होता है।''

दूसरा एक धनवान केवल उन्हीं फकीरों को दान देता है जो पवित्र होते हैं। वह कहा करता– ''फकीरों का एक लक्ष्य होता है। वह है ईश्वर। आपदा आने पर भी उनका मन ईश्वर से नहीं हटता। जिसका मन दुनियाँ की चीजों में फँसा है, ऐसे हज़ारों व्यक्तियों को दान देने की अपेक्षा एक ऋषि को दान देना उत्तम है। इससे उसका मन ईश्वर ही में लगा रहने में समर्थ रहता है।'' जुन्नेद ने मंजूर किया कि उसका कहना बहुत ठीक है।

कई दिन बाद दान देते–देते वह धनवान खुद गरीब बन गया। जुन्नेद ने कुछ रकम उसके पास भेजकर कहा ''इस रकम से फिर रोजगार शुरु करो। तुम्हारे सरीखा मनुष्य यदि व्यापार करके धन प्राप्त करे तो यह अनुचित नहीं है।''

जुन्नेद के एक शिष्य के पास बहुत धन दौलत थी। तमाम दौलत उनके चरणों में भेंट करके उस शिष्य ने पूछा कि अब एक मकान बाकी रह गया है, उसका वह क्या करे ? जुन्नेद ने वह मकान बेचकर उसकी कीमत भी लाने की आज्ञा दी। शिष्य ने आज्ञा का पालन किया। सारी रकम इकठ्ठी हो जाने पर उन्होंने उसे शिष्य के हाथ से ही नदी में फेंकवा कर उसके जीवन का सन्मार्ग खोल दिया।

अपने बहुत से शिष्यों में से जुन्नेद को एक शिष्य सबसे अधिक प्रिय था। इससे दूसरे शिष्य कुछ असंतुष्ट रहते, इसलिए उन्होंने एक दिन कहा– ''वह अधिक ज्ञानी एवं नीतिपरायण है। उसके गुणों के कारण ही मैं उसे अधिक चाहता हूँ। देखो मैं अभी परीक्षा करता हूँ, तुम सबको विश्वास हो जायेगा।'' प्रत्येक शिष्य के हाथ में एक–एक पक्षी और एक छुरी देकर उन्होंने कहा– ''जाओ किसी एकांत स्थान में जहाँ कोई न देखता हो इनकी बलि दे आओ।'' सभी अलग–अलग जगह जाकर पक्षियों की बलि दे आए, किन्तु वह शिष्य जीवित पक्षी ही लेकर लौट आया।

जुन्नेद ने पूछा– ''क्यों तुमने इसकी बलि नहीं दी ?''

शिष्य– ''गुरुदेव! मुझे कोई एकांत जगह मिली ही नहीं। मैं जहाँ–जहाँ गया ईश्वर तो वहाँ मौजूद ही था।''

जुन्नेद– ''देखो, इसके ज्ञान की तुलना अपने ज्ञान से करो।''

महर्षि जुन्नेद को जब अपना मरणकाल समीप मालूम दिया तब उन्होंने अपने साथियों को बार–बार ईश्वर का नाम लेकर प्रणाम किया। फिर कुरान के दूसरे अध्याय के सत्रहवें प्रवचन तक पाठ किया। जब उनके प्राण निकलने को हुए तो उनके साथियों ने कहा– ''प्रभु को याद करिए।''

वे बोले– ''उसकी याद दिलाने की ज़रूरत नहीं, मैं उसे एक पल भी नहीं भूलता।''

तसबीह हाथ में लेकर 'बिसमिल्लाअर्रहमान अर्ररहीम' का जाप करते हुए उन्होंने सदा के लिए आँखें मूंद लीं।

कहा जाता है कि उनके शव को नहलाते समय जब उनके नेत्र खोले जाने लगे तो देववाणी सुनाई दी कि मेरे भक्त ने मेरा नाम लेते हुए आँखें

मूंदी थी, मेरे सिवा किसी को देखने के लिए उसकी आँखें नहीं खुलेंगी।' तसबीह पकड़ने के कारण मुड़ी हुई अँगुलियाँ जब सीधी की जाने लगी तो सुनाई दिया– ''मेरा जाप करने के लिए ये अँगुलियाँ मुड़ी थीं, बिना मेरी आज्ञा के वे सीधी नहीं होंगी।''

उपदेश वचन

- जन्म के पहले तू ईश्वर को जितना प्यारा था उतना ही मृत्यु पर्यन्त बना रहे, ऐसा आचरण कर।
- धन–दौलत कमाने के पीछे क्यों पड़े हुए हो? तुम्हारी ज़रूरतों को पूरी करने और तुम्हारी देखभाल करने का भार तो ईश्वर ही ने ले रखा है, यदि उसका भरोसा करोगे तो सब तरह से शांति और सुख पाओगे।
- प्रभु की गुण–महिमा का ज्ञान पाना ही उसमें श्रद्धा और विश्वास करना है। एक बार उस विश्वास को पाकर फिर उसे खो न देना।
- अपने निर्वाह के लिए जो चिंता अथवा प्रपंच नहीं करता, वही सच्चा विश्वासी है।
- अहंभाव को छोड़कर विपत्ति को भी सम्पत्ति मानना ही सच्चा संतोष है।
- ईश्वर प्रेरित महापुरुषों के वचनों को साक्षात् ईश्वर के वचन मानो और सच्चे संतों के वचनों को उन वचनों की प्रतिध्वनि।
- जो ईश्वर में ही लीन रहता है वही सच्चा सूफी है।
- प्रायश्चित की भी तीन सीढ़ियाँ हैं– आत्मग्लानि, दूसरी बार पाप न करने का दृढ़ निश्चय और आत्मशुद्धि।
- जो आँखें ईश्वर की ताबेदारी में रहने में भला नहीं मानती उनका फूट जाना ही अच्छा है, जो जीभ ईश्वर की चर्चा नहीं करती वह

गूंगी ही रहे तो उत्तम, जो कान सत्य नहीं सुन सकते वे बहरे ही रह जायें तो अच्छा, और जो तन ईश्वर की सेवा में नहीं लगता उसका मर जाना ही अच्छा है।

- प्रभु के मार्ग में प्राण तक देने की तैयारी न हो तो उसके प्रति प्रेम है ऐसा मानना ही नहीं चाहिए।

एक बार एक व्यापारी एक साधु के पास दीक्षा पाने की आकंक्षा लेकर गया। साधु ने उससे कहा, "रुको, मैं थोड़ी देर बाद तुम्हारी दीक्षा शुरु करता हूं।" व्यापारी ने कई मौकों पर बार-बार साधु पर जल्द ही दीक्षा देने के लिए दबाव डाला। साधु ने अंततः मना कर दिया और उससे दूर चला गया। हालांकि कुछ सालों बाद वह साधु व्यापारी के पास वापस आया। इस बार उसके हाथ में एक भिक्षा की कटोरी थी जिसमें कुछ कीचड़, बाल, मल और मूत्र थे। साधु ने व्यापारी को दान देने के लिए कहा। व्यापारी अंदर से अच्छी-अच्छी मिठाईयां, खीर और हलवा दान में देने के लिए लेकर आया। उसने यह सोचकर यह सब व्यंजन तैयार किया था कि शायद साधु इस बार दीक्षा देने के लिए मान जाये। साधु ने व्यापारी से कहा, ''सारी भिक्षा इस कटोरी में डाल दो।'' ''मैं इस गंदी कटोरी में यह सब भोजन कैसे डाल सकता हूं स्वामीजी! कृपया कर कटोरी पहले साफ करें और फिर इसे वापस लाकर मुझे दें। फिर इसमें मैं तैयार किये हुए यह स्वादिष्ट व्यंजन डाल दूंगा।'' साधु ने जवाब देते हुए कहा, ''मैं भी इस कटोरी की तरह वासना, क्रोध, घमंड और लालच जैसी गंदगी से भरे तुम्हारे दिल में भगवान के शुद्ध रूप को कैसे स्थापित कर सकता हूँ? मैं दीक्षा की शुरुआत कैसे करुं, जब तुम्हारा मन इस कटोरी की तरह अशुद्धियों से भरा है।''

व्यापारी लज्जित हो गया और शर्म के मारे वहां से चला गया। बाद में उसने दान-पुण्य और निःस्वार्थ सेवा से खुद को शुद्ध किया और फिर दीक्षा के लिए साधु के पास गया। रंगीन पानी उन कपड़ों में आसानी से प्रवेश कर जाता है जो पूरी तरह सफेद होते हैं। इसी तरह साधु की बातें शिष्य के दिल और दिमाग में तभी अपनी जगह बनाती है जब उनका मन शांत रहता है। वहां किसी भी प्रकार की इच्छा और आनंद का वास नहीं होता। इससे मन की सारी अशुद्धियां दूर हो जाती हैं। स्व-जागृति और सच्चाई के मार्ग पर चलने के लिए किसी भी साधक के लिए अनुशासन और मन और इन्द्रियों की शुद्धि आवश्यक है। सबसे पहली इस आधार को तैयार करना आवश्यक है। फिर दीक्षा की प्राप्ति खुद-ब-खुद हो जायेगी।

रामाश्रम सत्संग (रजि.) गाज़ियाबाद

रजिस्टर्ड ऑफिसः 9-रामकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड, ग़ाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना — *सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष*

अरविन्द मोहन — *मंत्री*

घोषणाः संस्था की कार्यकारिणी समिति-(2018-2019)

मैं, शक्ति कुमार सक्सेना, पुत्र स्व. श्री कृष्ण सहाय सक्सेना, सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष, रामाश्रम सत्संग (रजि.) ग़ाज़ियाबाद (उ.प्र.) संस्था की वर्तमान कार्यकारिणी भंग करता हूँ। वर्ष 2018-2019 के लिए संस्था के विधान की धारा 10(ग) में प्रदत्त अधिकारों के तहत नवीन कार्यकारिणी समिति,पदाधिकारी एवं सदस्यों की निम्नवत् घोषणा करता हूँ, जो विधान की धारा 9(ग) के अनुरूप एक वर्ष हेतु वैध रहेगी :-

क्र.	पद	नाम	पता	व्यवसाय
1.	अध्यक्ष	डा. शक्ति कुमार सक्सेना	एस-ए-36 शास्त्रीनगर, ग़ाज़ियाबाद	डाक्टर
2.	मंत्री	श्री अरविन्द मोहन	2बी, नीलगिरी-3, सेक्टर-34, नौएडा	सर्विस
3.	कोषाध्यक्ष	श्री अनुराग चन्द्र प्रसाद	बी1-206, अरावली अपार्टमेंट, सेक्टर - 34, नौएडा	निजी व्यवसाय
4.	सदस्य	कैप्टन के.सी. खन्ना	आर -11/182, राजनगर, न्यू ग़ाजियाबाद	सेवानिवृत्त
5.	सदस्य	श्री उमाकांत प्रसाद	207, संयम प्रतीक अपार्टमेन्ट, खाजपुरा, पटना	सेवानिवृत्त

जारी

क्र.	पद	नाम	पता	व्यवसाय
6.	सदस्य	डॉ. दिनेश कुमार श्रीवास्तव	छावनी मौ. वार्ड नं.–4 पो. आ.–भभुआ, कैमूर	सेवानिवृत्त
7.	सदस्य	डॉ. मुद्रिका प्रसाद	साकेतपुरी मुजफ़्फरपुर बिहार	सेवानिवृत्त
8.	सदस्य	श्री. आर. पी शिरोमणी	मूलचन्द मार्किट शमशाबाद रोड, आगरा	सेवानिवृत्त
9.	सदस्य	श्री प्रियासरन	105– हिमालय टॉवर अहिंसा रवण्ड–2, इन्द्रापुरम, ग़ाज़ियाबाद	सेवानिवृत्त
10.	सदस्य	श्री अनिल कुमार	6, चेतना समिति ए. जी. कालोनी, पटना	सर्विस
11.	सदस्य	श्री विष्णु शर्मा	आर–27, नारायणा विहार गोपालपुरा, जयपुर	सर्विस
12.	सदस्य	प्रो. आर. के. सक्सेना	33–देशबन्धु सोसाईटी आई. पी. एक्सटेंशन, नई दिल्ली	सर्विस
13.	सदस्य	प्रो. आदर्श किशोर	5, नेहरू कॉलोनी गांधी रोड, आर.के पुरी ग्वालियर–474011	सेवानिवृत्त
14.	सदस्य	श्री कन्हैया पाल	फलैट नम्बर 201 एस.के. पुरम रोड न.–21 दानापुर, पटना–801503	सेवानिवृत्त जज

(ह0)

डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

अध्यक्ष एवं आचार्य

दिनांक 19–10–2018

रामाश्रम सत्संग (रजिस्टर्ड) ग़ाज़ियाबाद

रामाश्रम सत्संग (रजि.) गाज़ियाबाद

रजिस्टर्ड ऑफिसः 9–रामकृष्णा कॉलोनी, जी.टी.रोड, ग़ाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना 36, शास्त्री नगर

सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष ग़ाज़ियाबाद

घोषणा

मैं डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना पुत्र स्व. श्री कृष्ण सहाय सक्सेना, सर्वोच्च आचार्य एवं अध्यक्ष रामाश्रम सत्संग (रजि.) गाज़ियाबाद, एतद् द्वारा शिक्षक वर्ग, रामाश्रम सत्संग (रजि.) ग़ाज़ियाबाद की परिवर्द्धित सूची सर्वसाधारण हेतु निम्न प्रकार से जारी करता हूँ ।

पूज्य गुरुदेव द्वारा जो इज़ाज़तें जारी की जा चुकी हैं वह पूर्ववत् रहेंगी। नए भाईयों, जिनकी नियुक्ति की गई है, उनके नाम व गुरुदेव द्वारा पूर्व में घोषित नाम नीचे प्रकाशित किये जा रहे हैंः–

इज़ाज़त बैत शर्तिया (आचार्य पदवी प्रतिबंधित) क्र. 3 :–

1. श्री उमाकान्त प्रसाद, पटना
2. श्री दिनेश कुमार श्रीवास्तव, भभुआ
3. श्री कृष्ण चन्द्र खन्ना, ग़ाज़ियाबाद

उपरोक्त में से किसी को भी इज़ाज़त देने का अधिकार नहीं होगा।

इज़ाज़त तालीम (शिक्षक) क्र. 2:–

1. डॉ. मुद्रिका प्रसाद, मुज़फ्फरपुर
2. श्री आर. पी. शिरोमणी, आगरा
3. श्री अशोक प्रधान, नई दिल्ली
4. श्री विष्णु शर्मा, जयपुर
5. श्री भुवनेश्वर नाथ वर्मा, भभुआ
6. श्री महेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ, रेवाड़ी
7. डॉ. राजेश चन्द्र वर्मा, आरा
8. श्री पारसमणी ठाकुर, देवघर
9. श्री मोहन सहाय श्रीवास्तव, वाराणसी
10. डॉ. सुधीर कुमार, मोतीहारी
11. प्रो. आदर्श किशोर सक्सेना, ग्वालियर
12. श्री आदर्श कुमार, वाराणसी
13. श्री रामवृक्ष सिंह, चकिया
14. श्री छैल बिहारी श्रीवास्तव, कानपुर
15. श्री नारायण द्विवेदी, इन्दरगढ़
16. श्री ओ पी एम तिवारी, बेंगलूरू
17. श्री जयशंकर नाथ त्रिपाठी, कुशीनगर

उपरोक्त में से किसी को भी बैत करने का अधिकार नहीं होगा।

इज़ाज़त मॉनीटर (सत्संग कराने की) क्र. 1:–

1. श्री हरि शंकर तिवारी, सासाराम
2. श्री जे. सी. पी. सिन्हा, जमशेदपुर
3. श्री कन्हैया पाल, हाजीपुर
4. श्री जगजीवन पंडित, बरगनिया
5. श्रीमती आभा सिंह, बोकारो
6. श्री विनीत मिश्रा, अलवर
7. श्री बी.सी. महरोत्रा, राँची
8. श्री अवध बिहारी सिन्हा, सासाराम
9. श्री अरविन्द कुमार, वाराणसी
10. श्री प्यारे मोहन, बक्सर
11. श्री महेश प्रसाद वर्मा, सीतामढ़ी
12. श्री रमेश प्रसाद सिन्हा, मुजफ्फरपुर
13. श्री कामेश्वर प्रसाद चौधरी, दरभंगा
14. श्री राजेश कुमार सिंह, मुंगेर
15. श्री बिनोद कुमार, गोपालगंज
16. श्री भीम प्रसाद बरनवाल, झाझा
17. श्री एस.पी. श्रीवास्तव, मुगलसराय
18. श्री राजेन्द्र सिन्हा, लखनऊ
19. श्री रमेश चन्द्रा, लखनऊ
20. श्री हरपाल सिंह, एटा
21. श्री जटाशंकर लाल, गया
22. श्री राकेश कुमार श्रीवास्तव, चंडीगढ़
23. श्री सतीश कुमार, समस्तीपुर
24. श्री केदार राय, मधुबनी
25. श्री सुनील कुमार, पटना
26. श्री हरीश रोहिल्ला, झुंझुनू
27. श्री आशुतोष घोष, भागलपुर

उपरोक्त सज्जनों को इज़ाज़त दी जाती है कि वे केवल भाइयों को एकत्र करके सत्संग करा सकेंगे। उन्हें या नये भाइयों को तालीम (शिक्षा) देने या बैत (दीक्षा) देने की इजाज़त नहीं है।

उपरोक्त घोषित इजाज़तें आगामी घोषणा होने तक जारी रहेंगी और यदि इनके अतिरिक्त किसी के पास कोई और किसी भी प्रकार की इजाज़त है तो वह स्वतः ही प्रभावहीन हो जाती है।

(ह0)

डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

अध्यक्ष एवं आचार्य

दिनांक 19–10–2018 रामाश्रम सत्संग (रजिस्टर्ड) ग़ाज़ियाबाद

विज्ञान कहता है कि जीभ पर लगी चोट सबसे जल्दी ठीक होती है पर ज्ञान कहता है कि जीभ से लगी चोट कभी ठीक नहीं होती।

शोक समाचार

सखेद सूचना दी जाती है कि पिछले वर्ष रामाश्रम सत्संग के जिन बहन-भाइयों का देहावसान हो गया है उनकी सूची इस प्रकार है :-

- गुरुग्राम (गुड़गाँव) के रहने वाले और सत्संग के वरिष्ठ आचार्य श्री भजन शंकर सक्सेना जी का 10.12.2017 को। आप परमसंत डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज से दीक्षित थे। आपका सत्संग में विशेष योगदान रहा है।
- ग्वालियर के वरिष्ठ सत्संगी श्री रमेश चंद्र जौहरी का 1.08.2018 को। आप भी परमसंत डॉ. श्री कृष्ण लाल जी महाराज से दीक्षित थे और ग्वालियर सेंटर के इन्चार्ज भी थे।
- बक्सर के वरिष्ठ सत्संगी श्री गिरिजानन्द लाल जी का 28.11. 2018 को। आप भी दादा गुरुदेव डा. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज से दीक्षित थे और कई वर्ष तक बक्सर सेंटर के इन्चार्ज भी रहे।
- गोरखपुर के श्री गौर हरी कृष्ण (गौरीश भाई साहब) का 11.01. 2018 को। आप भी दादा गुरुदेव के समय से ही एक वरिष्ठ सत्संगी थे।
- लखनऊ के श्री पंकज भण्डारी का 18.08.2108 को।
- कन्नौज (इन्दरगढ़) की श्रीमति विद्यावति, पत्नी श्री नाथूराम का 08.05.2018 को।
- सासाराम के रामेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव का 24.10.2018 को।
- हाजीपुर के श्री कृष्ण मोहन का 23.01.2018 को।
- हाजीपुर के ही श्री राजकुमार झा के पिताजी श्री नगेन्द्र झा का 27.01.2018 को।

- सीतामढ़ी के श्री अलोन्द्र कुमार सिंह के भाई श्री शैलेन्द्र कुमार का 21.08.2018 को।
- जमशेदपुर की श्रीमति सुमित्रा देवी का 11.09.2018 को, आप श्री रामाशंकर सिन्हा की माता जी हैं।
- जमशेदपुर की ही श्रीमति प्रेम बाला देवी का 08.01.2018 को, आप श्री ए. के. लाल की माताजी हैं।
- श्री प्रयाग ठाकुर का 27.12.2018 को।
- गाज़ियाबाद की श्रीमति लक्ष्मी वर्मा जी का 31.05.2018 को। आप मोतिहारी के वरिष्ट सत्संगी स्व. श्री विनायक प्रसाद जी की धर्मपत्नी हैं।
- श्रीमति सरोज सक्सेना का 26.07.2018 को। आप श्री आई. एस. सक्सैना जी की धर्मपत्नी हैं।
- श्रीमति मनोरमा श्रीवास्तव का 14.08.2018 को गोरखपुर में।
- श्री बिक्रम जी का 7.10.2018 को। आप चकिया के श्री नन्दू प्रसाद के पिता थे।

परम पूज्य गुरुदेव के चरणों में प्रार्थना है कि इन सभी दिवंगत आत्माओं को शान्ति एवं सद्गति प्राप्त हो तथा इनके विरहाकुल परिवारी प्रियजनों को वियोग व्यथा सहने की शक्ति और धैर्य मिले।

– डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

तेरी रज़ा में "सतगुरु"
रहना आ जाए,
दुनिया जो भी कहे
सहना आ जाए,
ऐसी दो शक्ति हमें "सतगुरु"
खुद चिराग बनकर जलना आ जाए।

प्रेरक प्रसंग

सन् 1947 से पहले की बात है कि डेरा व्यास में एक पति पत्नी अपने एक बिल्कुल छोटे से बच्चे के साथ आए। उन्होंने बड़े प्रेम से बाबा सावन सिंह जी महाराज का सत्संग सुना और बाद में उन्होंने नामदान लेकर ही वापस जाने का विचार बना लिया। जब वो दोनों नामदान के लिए पेश हुए तो गुरुदेव ने कृपा करके उन्हें नामदान प्रदान किया। पत्नी का ध्यान अपने बच्चे की ओर आया और उसने दीनदयाल सत्गुरु जी से विनती की कि सच्चे पातशाह आप हमारे इस बच्चे को भी नामदान दे दो। सच्चे पातशाह ने कहा कि 'काको अभी यह बहुत छोटा है जब यह बड़ा हो जाएगा तो मैं इसे भी नामदान दे दूंगा।' यह सुनकर वह वापस अपने घर चले गए।

वह जिस स्थान से आए थे वह स्थान आजकल पाकिस्तान में है। कुछ ही दिनों में हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बंटवारे की बातें होने लगीं। आखिरकार वो समय आ ही गया जिसका डर था। पति शाम को जब दफ्तर से घर आया तो उसने अपनी पत्नी को बताया कि 'सरकार ने अपना फैसला सुना दिया है कि देश का बटवारा हो गया है जो हिन्दू हैं वो यहाँ से हिन्दुस्तान चले जाए और जो मुसलमान हैं वह वहाँ से पाकिस्तान चले जाएं। कल सुबह लाहौर से एक ट्रेन हिन्दुस्तान के लिए रवाना होगी और हमें उसमें जाना पड़ेगा। इसलिए आप बहुत ही कम और बहुत ही जरूरी सामान एक ट्रंक में रख लो। सुबह चार बजे ट्रेन चलेगी इसलिए आप जल्दी उठकर दो तीन समय का खाना बना लेना और इसी ट्रंक में रख लेना क्योंकि हालात खराब हैं। ट्रेन कहाँ रुकेगी और कब तक रुकी रहेगी कब हिन्दुस्तान पहुँचेंगे, कुछ भी मालूम नहीं है।' पत्नी ने जरूरी सामान, खाना और पैसे एक ट्रंक में रख दिए। पति ने ट्रंक अपने कन्धे पर और पत्नी ने बच्चे को अपनी गोद में उठाया। रास्ते में लुटेरों ने चारों ओर से पहरा लगा रखा था कि जिस भी आदमी के पास से जो कुछ भी मिले उससे ले लो और उसे जान से मार दो। दूर बैठे हुए लुटेरों ने उन्हें आते हुए देख कर शोर मचा दिया कि देखो वो लोग उधर से जा रहे हैं इनका सामान लूट लो और इन्हें जान से मारो। बेचारे जान बचाने के लिए कभी इस गली में तो

कभी उस गली में भाग रहे थे। हर तरफ से यही आवाजें आ रही थीं। दोनों तेजी से भाग रहे थे कि पति अचानक ठोकर खाकर गिर गया और कन्धे पर रखा हुआ ट्रंक भी गिर गया। पति ट्रंक को उठाने की कोशिश कर रहा था कि फिर पीछे से वही आवाजें सुनाई देने लगी। पत्नी ने कहा कि 'बाबू जी मरने दो ट्रंक को, भागो अपनी जान बचाओ।' ट्रंक वहीं छूट गया। आगे जाकर पत्नी को भी जोर से ठोकर लगी और उसकी गोद से बच्चा भी नीचे गिर गया। पत्नी ने जैसे ही अपने बच्चे को उठाने की कोशिश की तो पीछे से फिर आवाजें सुनाई देने लगीं। पति ने कहा जल्दी भागो अपनी जान बचाओ। बच्चा वहीं का वहीं पड़ा हुआ रह गया, बच्चा उठाने का भी मौका न मिला। पति–पत्नी दोनों भागते हुए रेलवे स्टेशन पर पहुँच गए। रेलवे स्टेशन पर पुलिस थी इसलिए वहाँ पर कोई डर न था। रेल गाड़ी जाने के लिए तैयार थी दोनों उसमें बैठ गए। रेलगाड़ी में बैठे सभी लोग आपस में हिन्दुस्तान जाने की बातें कर रहे थे और अपनी खुशी प्रकट कर रहे थे। उस डिब्बे में बैठे दोनों पति–पत्नी रो रहे थे क्योंकि न तो उनके पास उनका सामान था और न ही उनका बच्चा। पत्नी ने कहा कि ''मैंने तो सुना था कि सन्तों का वचन पूरा होता है। दुनिया बदल सकती है परन्तु सन्तों के वचन कभी भी नहीं बदलते। सन्तों के वचन अटल होते हैं और जब मैंने इस बच्चे को नामदान देने की बात कही थी तो उन्होंने कहा था कि जब यह बड़ा हो जाएगा तो मैं इसे भी नामदान दे दूंगा। हमारा बच्चा आज भूखा प्यासा मर जाएगा। लूटेरे उसे मार देगें यदि उनसे बच भी गया तो उसे कौआ गिद्ध खा जाऐंगे। आज हमारा बच्चा मर जाएगा और सन्तों का वचन झूठा हो जाएगा।'' रेलगाड़ी के कर्मचारी ने अपनी सीटी बजानी शुरू कर दी। इतने में एक आदमी कुली के रुप में एक कन्धे पर ट्रंक और दूसरे कन्धे पर बच्चा उठाए हुए जोर–जोर से ऊँची आवाजें लगाता हुआ हर डिब्बे के पास जाकर कह रहा था कि ''भाई जिसका यह ट्रंक हो ले लो, जिसका यह बच्चा हो ले लो।'' उसकी आवाज सुनकर जब खिड़की से बाहर देखा तो वो उनका ही ट्रंक और उनका ही बच्चा था। एकदम आवाज लगाई ''ओ भाई! इधर आओ यह हमारा ही ट्रंक है और यह बच्चा भी हमारा है।'' बच्चा लेकर उन्होंने अपनी छाती से लगा लिया। पत्नी ने कहा कि आप इसको

ट्रंक में रखे हुए सारे रूपए दे दो हम भीख मांग कर भी अपना गुजारा कर लेगें। पति ने सारे रूपए निकाले और उसे देने लगा तो भी उस आदमी ने रूपए लेने से इन्कार कर दिया और कहने लगा कि ''बाबूजी जिस ट्रंक में से आप पैसे निकाल कर मुझे दे रहे हैं यदि मैंने पैसे ही लेने होते तो यह ट्रंक तो पहले ही मेरे पास था। मैं पैसे लेने के लिए आप का ट्रंक और आप का बच्चा लेकर नहीं आया हूँ।'' बातचीत के दौरान एकदम पति–पत्नी का ध्यान उस आदमी के कुर्ते पर गया तो क्या देखा कि उसके कुर्ते का एक कन्धा ट्रंक उठाने के कारण फटा हुआ है और उसमें से खून निकल रहा है और दूसरा कन्धा बच्चे के मल मूत्र से लथपथ हो चुका था। क्योंकि बच्चा गिर जाने से डर गया था और घबराया हुआ था इसलिए उससे कन्धे के ऊपर ही मल मूत्र होता जा रहा था। उन्होंने कहा ''ऐसी हालत में कष्ट उठाकर आप हमारा ट्रंक और हमारा बच्चा लेकर आए हो आप यह सारे पैसे रख लो।'' उसने कहा कि ''देख काको! मैं पैसे लेने के लिए नहीं आया हूँ। मैं इसलिए आया हूँ कि कहीं आप का विश्वास न टूट जाए कि सन्तों का वचन सच्चा नहीं होता। यदि मैं आज इस बच्चे को आप के पास नहीं पहुँचाता तो आपका विश्वास सन्तों के वचनों से उठ जाता। मैं तो इसलिए आया हूँ कि सन्तों का वचन अटल होता है और उस पर आपका विश्वास टूटने न पाये।'' तभी रेलगाड़ी ने अपनी चलने की रफ्तार बढ़ा दी। जब पति–पत्नी ने खिड़की से बाहर को देखा तो उन्हें रेलवे स्टेशन पर कोई भी आदमी दिखाई न दिया। दोनों पति–पत्नी की आंखों में आंसुओं की धारा बहती जा रही थी जो कि रूकने का नाम नहीं ले रही थी। उन्होंने आपस में बात की कि ''जिस दिन हमने नामदान के समय इस बच्चे को भी नामदान देने की विनती की थी उस दिन भी मुझे सतगुरु जी ने 'काको' कहकर ही बुलाया था और कहा था कि तू इस बच्चे की चिन्ता मत कर जब यह बड़ा हो जाएगा तो मैं इसे भी नामदान दे दूंगा।'' आज जब हमारा विश्वास डगमगा रहा था तब सन्तों का वचन झूठा न हो और उनके ऊपर विश्वास बना रहे इसी मकसद से सतगुरु को स्वयं अपना रूप बदल कर आना पड़ा। इन्सान थोड़ी सी मुसीबत आ जाने पर अपने सत्गुरु के ऊपर से विश्वास उठा लेता है। सन्तमत करनी का मार्ग है कथनी का नहीं। सन्त

जो कुछ समझाते है वो उनका अपना अनुभव होता है कोई सुनी सुनाई बातें नहीं होती। सन्त कबीर जी ने लिखा है कि

'तू कहता कागज की लेखी, मैं कहता आंखों की देखी।'

सन्तों के बताए हुए मार्ग पर चलो और अपनी ही आंखों से अपने ही अन्दर स्वयं देखो कि वह परम पिता परमात्मा हमारे अन्दर है और कितनी बेसब्री से हमारा इन्तज़ार कर रहा है। जीवन अनमोल है, इसका हर एक स्वांस इतना कीमती है कि तीन लोक की कीमत देकर भी एक स्वांस खरीदा नहीं जा सकता। जिसे हम दिनरात लोगों की निन्दा, चुगली करके और दुनियांवी धन दौलत को इकट्ठा करने में व्यर्थ गंवा रहे हैं। मुत्यु के समय सब कुछ यहीं का यहीं रह जाएगा। अन्त में केवल एक सत्गुरु और उसके सच्चे नाम की कमाई ही हमारे साथ जाएगी।

आप पुण्य आत्मा हैं

एक औरत अपने बच्चे को एक संत व्यक्ति के पास लेकर गई। उसने संत से कहा, ''मेरे डॉक्टर ने कहा है कि मेरे बेटे को मधुमेह है। इसलिये उसे मीठा नहीं खाना चाहिए। लेकिन अगर मैं उसे मना करुंगी, तो वो मीठा खाना बंद नहीं करेगा। चूंकि आप एक पुण्य आत्मा हैं, इसलिए मुझे यकीन है कि अगर आप उसे मीठा खाने के लिए मना करेंगे तो वो आपकी बात जरूर सुनेगा और इस तरह उसका जीवन सुरक्षित रह सकेगा।'' संत ने एक क्षण के लिए कुछ सोचा और फिर उस महिला से कहा, ''मैं बच्चे को आज मीठा खाने के लिए मना नहीं कर सकता। उसे वापस कल मेरे पास लेकर आओ।'' निराशा और उलझन के साथ महिला बच्चे को लेकर वापस लौट गई।

अगले दिन वह फिर संत के पास आई। संत ने कड़ाई से लड़के को देखा और कहा, ''तुम्हें मीठा खाना बंद कर देना चाहिए।'' लड़का इतना चौंका हुआ था कि उसने उस दिन के बाद मीठा खाना छोड़ दिया। जब मां ने उत्सुकता से उस संत से पूछा, ''स्वामीजी, आपने यही बात कल मेरे बेटे से क्यों नहीं कही थी?'' संत ने जवाब दिया, ''क्योंकि कल जब तुम मेरे पास आई थी, तभी मैं खुद मीठा खा रहा था।''

इन्द्रियों की अग्नि में इंधन न डालें

किसी वस्तु को स्पर्श करने, चखने, सूंघने, देखने तथा सुनने से इन्द्रियों को सुख मिलता है। आज पूरी दुनिया इन पाँच स्रोतों से सुख भोगने के पीछे भाग रही है। भौतिकवादी जीवन का यही एकमात्र उद्देश्य है।

भौतिकवाद भोगवाद को बढ़ावा देता है। भौतिकवाद वस्तुओं को ऐसे सुन्दर–सजीले रूप में प्रस्तुत करता है कि वे और अधिक आकर्षक बन जाती हैं। इस प्रकार हमारी भोग–इच्छा रूपी अग्नि में ईंधन का काम करती है। तकनीकी प्रगति और मीडिया का दुरूपयोग करके कामुकता को बढ़ावा दिया जाता है। लोगों को इस भ्रम में डाला जाता है कि वे इन वस्तुओं को प्राप्त करके सुखी हो सकते हैं। परन्तु अधिकांश लोग इन भोग वस्तुओं के पहुँच से दूर रहते हैं। इस प्रकार, चारों ओर प्रदर्शित भोग–वस्तुएँ लोगों की अतृप्त वासनाओं को बढाने में ईंधन का कम करती है और उन्हें जलाती रहती है।

य ापि हम इस भोगवादी प्रचार को नहीं रोक सकते, किन्तु व्यक्तिगत रूप से इसपर रोक लगा सकते हैं। अर्थात्, बुद्धि की सहायता से मन में उठने वाले विचारों पर अंकुश लगा सकते हैं। मूल रूप से हम सब आत्मा हैं और सर्वाकर्षक भगवान् श्रीकृष्ण के सनातन प्रेम में आनंद लेना हमारा अधिकार है। हमें यह ज्ञान देकर भगवद्गीता हमारी बुद्धि को सशक्त बनाती है।

आत्मा के रूप में हम स्थाई एवं सनातन हैं और यह संसार अस्थाई है। भगवद्गीता (२.१४) बताती है कि हमें सर्दी–गर्मी, सुख–दुःख आदि के अस्थाई स्वभाव को समझकर उन्हें सहन करना चाहिए। हमें लगता है कि हमें केवल दुखों को सहन करना है और सुखों का भोग करना है। फिर गीता क्यों हमें सुख–दुःख दोनों को सहन करने के लिए कहती है ? क्योंकि ये दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जितना अधिक हम सुखद परिस्थितियों में भोग करेंगे उतनी अधिक हमारी चेतना भौतिक संसार में लिपटने लगेगी, और फिर अप्रिय परिस्थिति उत्पन्न होने पर हमें उतना ही अधिक दुःख होगा। इसलिए हमें सुखों को भी सहन करना है। सहन करने का अर्थ है कि हमें सुखों की बढ़ा–चढ़ाकर कल्पना नहीं करनी है और आवश्यकता से अधिक उसमे संलग्न नहीं होना है। सुखों को सहन करने से हमारी चेतना सांसारिक बंधन से मुक्त होने लगती है।

क्या सहन करने का अर्थ सब कुछ छोड़ना है ? भक्तिमार्ग पर सहन करने का अर्थ सब कुछ छोड़ना नहीं होता। भक्तियोग हमें श्रीकृष्ण से जोड़ता है और हमें इस संसार के भोगों से कहीं अधिक सुख प्रदान करता है।

हे कौन्तेय! क्षणभंगुर सुख–दुःख का आना और समय के साथ उनका चले जाना, यह सर्दी और गर्मी के आने–जाने के समान है। हे भरतवंशी, ये सुख–दुःख इन्द्रिय–स्पर्श से जन्म लेते हैं। मनुष्य को चाहिए कि विचलित हुए बिना इन्हें सहन करना सीखें।

(भगवद्गीता २.१४)

राम संदेश के नियम

1. आध्यात्मिक विद्या के गुप्त और अनुभवी रहस्यों तथा सदाचार–शिक्षा को सरल भाषा में जनता तक पहुँचाना हमारी राम सन्देश पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है।
2. राम–सन्देश में आत्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लेख ही छपते हैं, राजनैतिक या रोमांचक लेख नहीं। रचनाओं में काट–छाँट करने अथवा छापने या न छापने की स्वतंत्रता सम्पादक को है।
3. राम सन्देश का वर्ष जनवरी में आरम्भ होता है। वार्षिक चन्दा 20 (बीस) रुपये है। एक वर्ष से कम तथा आजीवन ग्राहक नहीं बनाये जाते। चन्दा दशहरा भंडारों में या मैनेजर, राम संदेश को, 9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी. टी. रोड, ग़ाजियाबाद (उ.प्र.) 201009 के पते पर दिसम्बर के अंत तक अवश्य भिजवा दें।
4. राम सन्देश डाक द्वारा नहीं भेजा जाता है। इसका वितरण भंडारों पर ही किया जाता है। कृपया अपनी प्रति लेना न भूलें।

राम संदेश

रजिस्टर्ड ऑफिस

9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड,
गाज़ियाबाद–201009

मुद्रक, प्रकाशक व संपादक : डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

मुद्रण : अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, बी–66, सैक्टर–6, नोएडा–201301